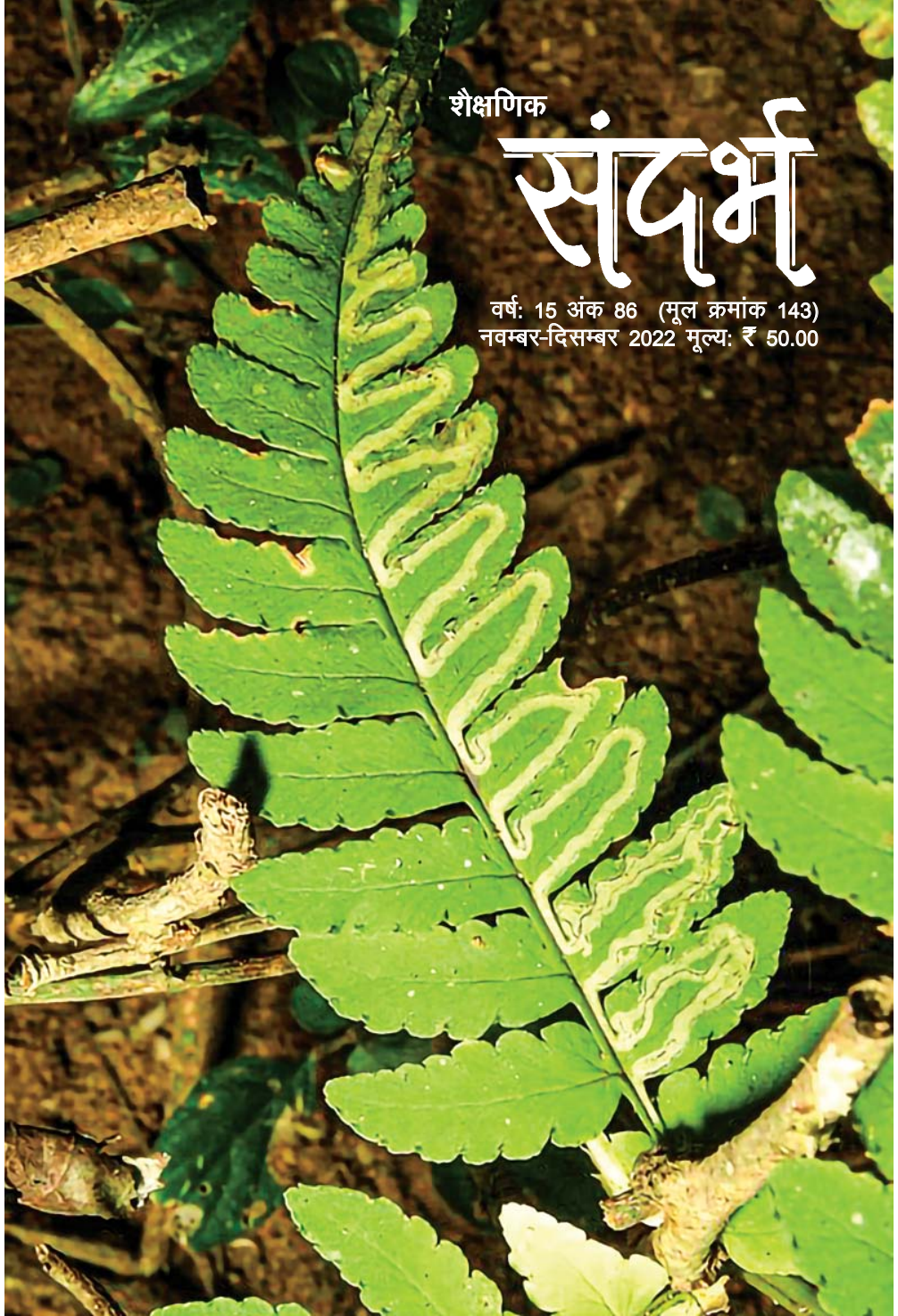

शैक्षणिक

संदर्भ

वर्ष: 15 अंक 86 (मूल क्रमांक 143)
नवम्बर-दिसम्बर 2022 मूल्य: ₹ 50.00

सम्पादन
राजेश खिंदरी
माधव केलकर

प्रबन्धकीय सह-सम्पादक
पारुल सोनी

सहायक सम्पादक
अतुल वाधवानी

सम्पादकीय सहयोग
सुशील जोशी,
उमा सुधीर

आवरण
राकेश खत्री

वितरण: झनक राम साहू

सहयोग
अनमोल जैन, श्रेया,
कमलेश यादव

शैक्षणिक
संदर्भ

वर्ष: 15 अंक 86 (मूल क्रमांक 143)
नवम्बर-दिसम्बर 2022

मूल्य: ₹ 50.00

एकलव्य फाउण्डेशन
जमनालाल बजाज परिसर
जाटखेड़ी, भोपाल-462 026 (म.प्र.)
फोन: +91 755 297 7770, 71, 72, 4200944
www.sandarbh.eklavya.in
सम्पादन: sandarbh@eklavya.in
वितरण: circulation@eklavya.in

अब *संदर्भ* आप तक पहुँचेगी रजिस्टर्ड पोस्ट से इसलिए सदस्यता शुल्क में वृद्धि की जा रही है।

सदस्यता शुल्क	एक साल (6 अंक)	तीन साल (18 अंक)	आजीवन
	450.00	1200.00	8000.00

मुखपृष्ठ: वायनाड, केरल में एक फर्न पर लीफ-माइनर द्वारा की गई क्षति। पत्तियों पर नाग जैसी आकृति बनाने वाले कीड़े ने 1991 के दौर में पूरे देश में आतंक मचा दिया था। इन आकृतियों के पीछे के सत्य से अनभिज्ञ लोगों में यह अफवाह फैल गई थी कि नाग देवता क्रोध में आकर सब्ज़ियों के पत्तों पर रूप धारण कर इन्सानों से बदला ले रहे हैं। अफवाह ने इतनी आग पकड़ी कि लोगों ने सब्ज़ियाँ खाना छोड़ दिया और मुद्दा संसद में पहुँच गया। पढ़िए इस विचित्र कीड़े की कारस्तानी के बारे में लेख, पृष्ठ 11 व 23 पर।

पिछला आवरण - लोनार झील, महाराष्ट्र। एक उल्कापिण्ड के धरती से टकराने से बनी एक खारे पानी की झील। ऐसी अद्भुत खगोलीय घटनाएँ प्रायः मन में उल्कापिण्डों के प्रति तीव्र जिज्ञासा पैदा करती हैं। उल्कापिण्डों की बरसात, जिन्हें आम तौर पर 'टूटते तारे' कहा जाता है, साल भर साफ आसमानों की रातों में नंगी आँखों से देखी जा सकती है। इस साल भी मध्य दिसम्बर में जैमेनिड्स शावर देखा जा सकेगा। तो क्यों न उससे पहले, हम उल्काओं का अपना ज्ञान पुख्ता कर लें? पढ़िए सम्बन्धित लेख पृष्ठ 5 पर।

यह अंक त्रिवेणी एजुकेशनल ट्रस्ट के वित्तीय सहयोग से प्रकाशित किया जा रहा है।

LINK : Cover 1 - https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Leaf_miner_-_fern.jpg
Cover 4: https://travelobiz.com/lonar-lake-in-maharashtra-chosen-as-ramsar-site/amp/

आज ही ऑर्डर करें

मूल्य: ₹ 260.00

यह किताब किशोर लड़कों में किशोरावस्था के दौरान शारीरिक पहलुओं के साथ-साथ सामाजिक एवं भावनात्मक पहलुओं पर चर्चाओं और किशोरों के मन में उठने वाले सवालों के हल खोजने के लिए एक बेहतर ज़रिया हो सकती है। न सिर्फ किशोरों के लिए बल्कि शिक्षकों और अभिभावकों के लिए भी उपयोगी साबित हो सकती है।

ऑर्डर करने के लिए ...

फोनः +91 755 297 7770-71-72; ईमेलः pitara@eklavya.in

www.eklavya.in | www.pitarakart.in

एकलव्य

जंगल उगाना

क्या शहरी इमारतों के जंगल के बीच हम एक प्राकृतिक जंगल उगा सकते हैं? जी हाँ! यह सम्भव है, मियावाकी पद्धति से! इस पद्धति से न सिर्फ भीड़-भाड़ वाले शहरी इलाकों में, बल्कि बंजर बियाबान इलाकों में भी तेज़ी-से एक हरा-भरा जंगल उगाया जा सकता है। जंगल तापमान नियमन, बाढ़ नियंत्रण, मिट्टी की उर्वरता के निर्माण, परागण को सहारा देने और कार्बन स्थिरीकरण में मदद करते हैं। आज जलवायु परिवर्तन के दौर में जब आए दिन बाढ़, भूस्खलन और कोई-न-कोई प्राकृतिक आपदा होती ही रहती है, यह मियावाकी पद्धति एक आशा की किरण बनकर सामने आई है।

29

शिक्षा और मनोविज्ञान: नाज़ुक कड़ियों को...

यह साक्षात्कार कमला मुकुन्दा की किताब *व्हाट डिड यू आस्क ऐट स्कूल टुडे* के बारे में बातचीत है जो सीखने-सिखाने और आकलन की प्रक्रिया को बाल मनोविज्ञान के नज़रिए से प्रस्तुत करती है। आज जब शिक्षा में बहुत-से बदलाव आ रहे हैं, शिक्षा और मनोविज्ञान के बीच का सम्बन्ध और भी प्रखर होता जा रहा है। वे कहती हैं कि अध्यापकों और शिक्षाविदों को मनोविज्ञान पर बहुत गम्भीरता से ध्यान देने की ज़रूरत है ताकी वे कक्षा के भीतर के व्यवहार को एक आलोचनात्मक रूप से नया आयाम दे सकें। इस साक्षात्कार में पढ़ते हैं *व्हाट डिड यू आस्क ऐट स्कूल टुडे* को लिखने के पीछे के कमला मुकुन्दा के विचारों को।

59

शैक्षणिक संदर्भ

अंक-86 (मूल अंक-143), नवम्बर-दिसम्बर 2022

इस अंक में

05 | उल्काओं की बरसात: कुदरत का एक करिश्मा
शशि सक्सेना

11 | पत्तों पर नाग-नागिन
कालू राम शर्मा

23 | पत्तियों पर साँप!
(चकमक के झरोखे से)

29 | जंगल उगाना
आनन्द नारायणन और राधा गोपालन

36 | तारा की क्लास
गोपाल मिड्ढा

43 | अधिगम क्षति (लर्निंग लॉस)
मीनू पालीवाल

51 | सोचने की प्रक्रिया का एक अध्ययन
सुरेन्द्र नाथ त्रिपाठी

59 | शिक्षा और मनोविज्ञान: नाज़ुक कड़ियों को समझने...
कमला मुकुन्दा के साथ बातचीत

71 | अगस्त 2026: आएँगी हल्की फुहारें
रे ब्रैडबरी

82 | आम जहाँ से टूटता है, उस हिस्से से गले में खराश क्यों?
सवालीराम

आज ही ऑर्डर करें

मूल्य: ₹ 80.00

ग्लोबल वॉर्मिंग हमारे दौर की सबसे बड़ी चुनौती है। मीडिया और राजनीति में इस सवाल पर जो हावी विमर्श है, वह अभी भी बुनियादी बदलावों की ज़रूरत से कन्नी काटता नज़र आ रहा है। इसी को ध्यान में रखते हुए यह किताब ग्लोबल वॉर्मिंग की वजहों, इसके वैज्ञानिक आयामों और इस दिशा में उठाए गए कदमों की चर्चा सरल व समझ में आने वाली भाषा में करती है।

ऑर्डर करने के लिए ...

फोनः +91 755 297 7770-71-72; ईमेलः pitara@eklavya.in

www.eklavya.in | www.pitarakart.in

एकलव्य

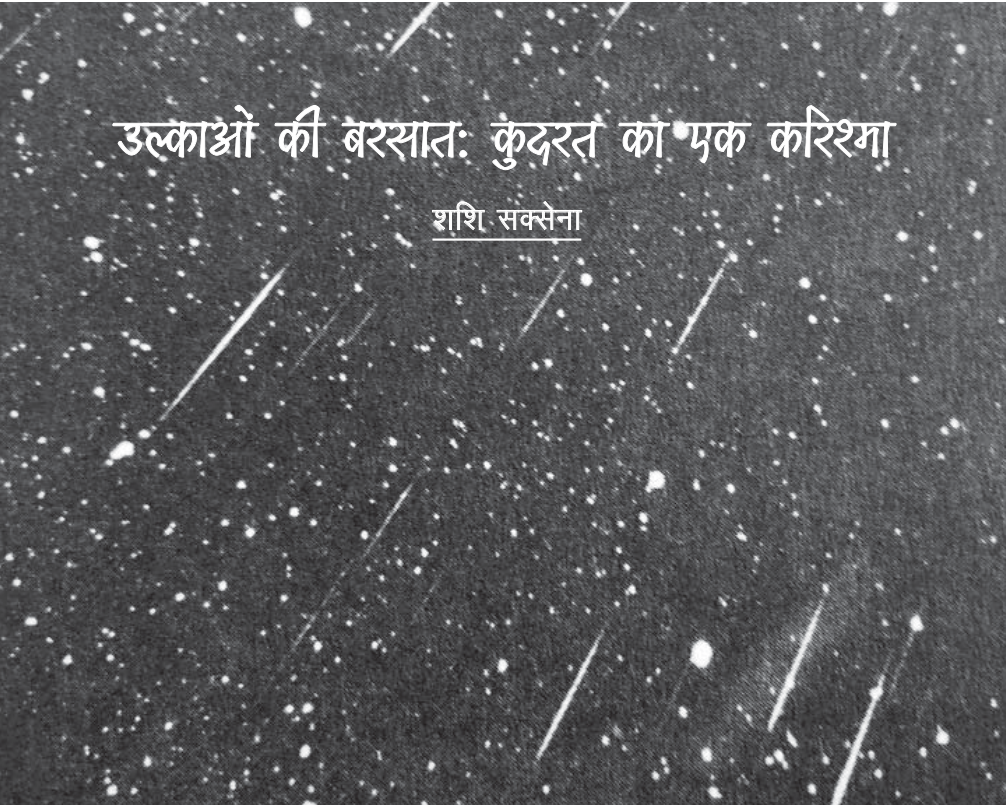

उल्काओं की बरसात: कुदरत का एक करिश्मा

शशि सक्सेना

"मुझे एक दिखा!"

"अरे, एक और!"

"देखना क्या है? मुझे तो कुछ भी नहीं दिखा।"

"जब देखोगे तो खुद समझ जाओगे।"

"हाँ, हाँ, मुझे दिख गया। और समझ में भी आ गया कि क्या देखना है!!"

"यह वाला कितना चमकीला था!"

"वाह, दो एक साथ! एकदम समानान्तर!"

"एक इधर! एक उधर भी।"

"कितनी देर से एक भी नहीं दिखा। आ भई जल्दी आ।"

"यह तो छोटू-सा था!"

"कितना लम्बा! कितनी देर दिखता रहा! मुझे भी दिखा! मुझे भी!"

"इसमें तो रंग भी थे!"

"एक और! मेरा स्कोर बीस हो गया!"

यह पढ़कर आपको ज़रूर लग रहा होगा कि कुछ बच्चे कोई खेल खेल रहे हैं। अगर ऐसा लगा तो आप गलत हैं! यह पन्द्रह लोगों का एक मिश्रित समूह है जिसमें कम-से-कम उम्र 27 साल है। इतने सारे वयस्क

क्या देखकर इतना हल्ला मचा रहे हैं?

पिछले साल की बात है, ये पन्द्रह लोग 13 दिसम्बर, 2021 की कड़कड़ाती सर्दी में अपने को रजाई, कम्बलों और स्लीपिंग बैग्स से ढके हुए खुले आसमान के नीचे लेटकर मीटिओर शावर या उल्काओं की बौछार का मज़ा लूट रहे थे। सुबह होने तक ये लोग इतनी सारी उल्काएँ देख चुके थे कि उनकी गिनती रखना भी सम्भव नहीं था। जी हाँ, 13-14 दिसम्बर की रात को ऐसी सैकड़ों उल्काएँ देखी जा सकती हैं। हर साल, बिना नागा!

कभी-कभी ऐसा भी करना चाहिए कि हम ज्ञान-विज्ञान में फँसे बिना किसी चीज़ का बस मज़ा लें। पर मीटिओर शावर देखकर मन में ये सवाल उठने स्वाभाविक हैं कि ये मीटिओर होते क्या हैं, कहाँ से आते हैं? और इस खास दिन इतने सारे मीटिओर क्यों दिखाई देते हैं? इसलिए आइए, थोड़ा-बहुत इस बारे में भी जान लें।

मीटिओर या उल्काओं को हम आम भाषा में हिन्दी में 'टूटते तारे' या अँग्रेज़ी में 'शूटिंग स्टार' कहते हैं। ये आकाश में कुछ क्षण चमक दिखाने के बाद अँधेरे के आगोश में खो जाते हैं। कभी-कभी रात को आकाश में एक-दो टूटते तारे दिखाई दे जाते हैं और पहाड़ों पर तो लगभग रोज़ ही। लेकिन हम यहाँ जो बात कर रहे हैं, उसमें कुछ घण्टों तक सैकड़ों मीटिओर दिखाई देने की बात हो रही है। आपने यह भी सुना होगा कि टूटता तारा देखते समय कोई इच्छा करो तो वह पूरी हो जाती है! कुछ साल पहले शाहरुख खान की एक फिल्म में भी ऐसा ही एक दृश्य था।

सबसे पहले तो यह जानना ज़रूरी है कि उल्काओं का तारों से कोई लेना-देना नहीं होता। इनका नाम टूटते तारे या शूटिंग स्टार शायद इसलिए पड़ा होगा क्योंकि ये हमें आकाश में तेज़ चमकते हुए दिखाई देते हैं। फिर आखिर ये हैं क्या?

हम सभी हर रात के आकाश में तारे, ग्रह और उपग्रह देखते हैं। हमारे सौरमण्डल में इनके अलावा और भी बहुत-से पिण्ड होते हैं। जैसे कि कॉमेट या धूमकेतु और ऐस्टेरोएड्स या क्षुद्रग्रह। आइए, इन सबके बारे में कुछ जान लेते हैं।

ऐस्टेरॉएड्स यानी क्षुद्रग्रह छोटे आकार के चट्टानों या धातुओं से बने पिण्ड होते हैं जो कि सूरज के चारों ओर घूमते हैं। मोटे तौर पर ये मंगल और बृहस्पति ग्रह के बीच के इलाके में फैले हुए हैं। इस इलाके को ऐस्टेरॉएड बेल्ट कहा जाता है। ये ग्रहों से काफी छोटे होते हैं इसलिए इन्हें मायनर प्लेनेट्स भी कहा जाता है। इन पर कोई वायुमण्डल नहीं होता। इनका व्यास कुछ मीटर से 1000 किलोमीटर तक देखा गया है। पिछले 200 साल में सौरमण्डल में

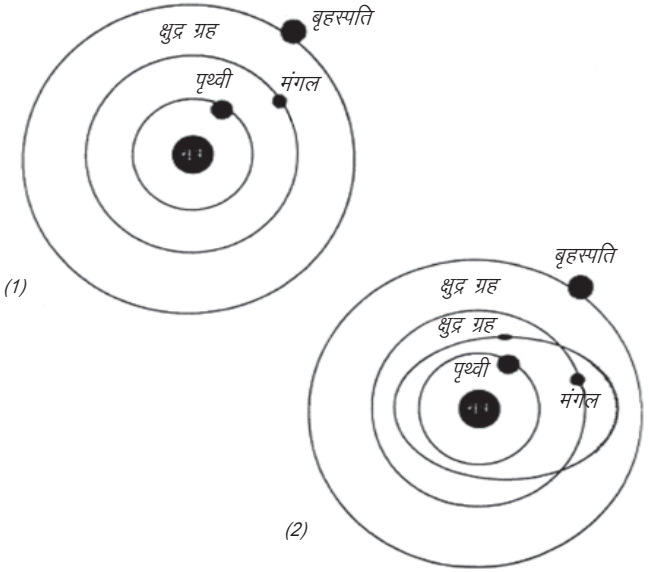

चित्र-1.1: *इस चित्र में सूर्य की परिक्रमा करने वाले ग्रहों में से पृथ्वी, मंगल और बृहस्पति को दिखाया गया है। मंगल-बृहस्पति के बीच में क्षुद्र ग्रहों (मायनर प्लेनेट्स) की पट्टी या बेल्ट को दर्शाया गया है। ज़्यादातर क्षुद्र ग्रह इसी बेल्ट में बने रहते हुए सूर्य की परिक्रमा करते हैं। यह चित्र आनुपातिक नहीं है।*

चित्र-1.2: *कुछ क्षुद्र ग्रहों के परिक्रमा परिपथ अत्यन्त अण्डाकार होते हैं जिसकी वजह से सूरज का चक्कर लगाते समय वे पृथ्वी के काफी करीब से होकर गुज़रते हैं। ऐसे समय क्षुद्र ग्रहों से निकला मलबा या क्षुद्र ग्रह खुद पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र में आकर वायुमण्डल में प्रवेश कर सकते हैं।*

मौजूद हज़ारों ऐस्टेरॉएड पहचाने जा चुके हैं। आम तौर पर माइनर प्लेनेट दीर्घवृत्ताकर कक्षा में सूर्य की परिक्रमा करते हैं लेकिन कुछ ऐस्टेरॉयड का परिक्रमा-कक्ष काफी चपटापन लिए होता है इसलिए वे पृथ्वी, शुक्र, बुध के परिक्रमा कक्ष को काटते हुए सूर्य की परिक्रमा करते हैं। इस वजह से कभी-कभी वे पृथ्वी के काफी करीब से गुज़रते हैं।

कॉमेट या धूमकेतु या पुच्छल तारे भी सूरज के चारों ओर घूमते हैं पर ये बर्फ और धूल से बने होते हैं। धूमकेतु पर वायुमण्डल होता है जो उनके नाभिक को घेरे रहता है। जब ये सूरज के पास से गुज़रते हैं तो गर्म होकर गैसें उत्सर्जित करते हैं। इससे इनका वातावरण चमकदार नज़र आता है और कभी-कभी साथ में पूँछ जैसा आकार दिखाई देता है। इस

चित्र-2: धूमकेतु जब सूर्य की परिक्रमा करते हुए सूर्य के करीब आ जाता है तब तापमान की वजह से धूमकेतु की लम्बी पूँछ विकसित हो जाती है जो उसकी पहचान बन जाती है। टेलीस्कोप की मदद से धूमकेतु की ली गई एक तस्वीर। धूमकेतु से बिखरे पदार्थ भी कालान्तर में, जब पृथ्वी उस जगह से गुज़रती है तो पृथ्वी पर उल्काओं की बारिश का सबब बन जाते हैं।

पूँछ जैसी रचना के कारण इन्हें पुच्छल तारा भी कहते हैं। धूमकेतु की परिक्रमा-कक्षा आम तौर पर अण्डाकार होती है और इनका परिभ्रमण काल भी अलग-अलग होता है। कुछ महीनों से लेकर सैकड़ों साल तक। अभी तक करीब 4500 धूमकेतुओं के बारे में पता है और हर साल करीब एक कॉमेट बिना किसी उपकरण की मदद लिए देखा जा सकता है।

दरअसल, मीटिओरॉएड्स या उल्का पिण्ड, ऐस्टेरॉएड व कॉमेट (जिनके बारे में ऊपर बताया गया है) के अवशेष या टूटे हुए टुकड़े होते हैं और कुछ अन्य ग्रहों, उपग्रहों का बिखरा मलबा भी। ये आकार में कुछ सेंटीमीटर से कुछ मीटर के होते हैं। कुछ मीटिओर चट्टानों से बने होते हैं और कुछ धातुओं से, और कुछ चट्टान व धातु, दोनों से बने होते हैं।

जब कोई उल्का पिण्ड तेज़ गति से पृथ्वी के वातावरण में प्रवेश करता है तो घर्षण के कारण इसका तापमान इतना बढ़ जाता है कि वह आकाश में जलने लगता है। रात के समय हमें चमकती हुई तेज़ रोशनी की लकीर दिखाई देती है तो हम अनायास कह उठते हैं कि 'देखो, तारा टूटकर गिर रहा है'। यदि किसी रात को सैकड़ों उल्काओं को चमकदार लकीरों के साथ गिरते हुए देखते हैं, इसे उल्का वृष्टि या मीटिओर शावर कहा जाता है। ऐसी उल्का वृष्टि तब होती है जब पृथ्वी सूरज की परिक्रमा करते हुए ऐसे स्थान से गुज़रती है जहाँ धूमकेतु का मलबा, उल्का वगैरह बिखरे हों। ऐसे में रात के आसमान में उल्काओं की वर्षा होती देखी जा सकती है। चूँकि, पृथ्वी व अन्य पिण्ड एक नियत गति से सूर्य का चक्कर लगाते हैं इसलिए पृथ्वी का अपनी कक्षा में किसी स्थान विशेष पर होने का नियत समय होता है। इसी तरह

धूमकेतु वगैरह भी नियत समय पर पृथ्वी की कक्षा के पास से होते हुए सूर्य का चक्कर लगाते हैं। इसलिए पृथ्वी हर साल तयशुदा महीने में चट्टानी टुकड़ों व मलबे के पास से गुज़रती है।

कई बार कुछ उल्काएँ पूरी तरह नहीं जल पातीं और उनके बड़े टुकड़े पृथ्वी के वातावरण को पार कर धरती की सतह पर आ गिरते हैं। इस स्थिति में पृथ्वी पर गिरने वाले पिण्डों को उल्कापात कहा जाता है। महाराष्ट्र के बुलढाणा ज़िले में तकरीबन औसतन 1.2 किलोमीटर व्यास वाली एक झील है। आज वैज्ञानिक ऐसा मानते हैं कि यह झील किसी उल्का के गिरने से बनी थी।

अब हम वापस उस मीटिओर शावर की ओर आते हैं जिसका ज़िक्र हमने शुरुआत में किया था। यह जानना ज़रूरी है कि मीटिओर शावर केवल 13-14 दिसम्बर की रात को ही नहीं होते, बल्कि साल की और भी कई रातों में होते हैं। साल के अलग-अलग समय पर होने वाले मीटिओर शावर के अलग-अलग नाम हैं, जैसे कि 4 से 20 दिसम्बर के बीच दिखने वाले मीटिओर, जिनका अधिकतम 13-14 दिसम्बर की रात को होता है, जैमेनिड्स कहलाते हैं। इनका नाम जैमेनिड्स इसलिए है क्योंकि ये जैमिनी नक्षत्र से आते हुए प्रतीत होते हैं। इनकी उत्पत्ति 3200 पायथन नामक एक ऐस्टेरॉएड से होती है, जो अन्य किसी भी ऐस्टेरॉएड की तुलना में सूरज के सबसे करीब आ जाता है।

चित्र-3: *लोनार झील, जिसे लोनार क्रेटर के नाम से भी जाना जाता है, एक अधिसूचित राष्ट्रीय भू-विरासत, खारे पानी की झील है। यह महाराष्ट्र के बुलढाणा ज़िले में लोनार में स्थित है। लोनार झील एक उल्कापिण्ड के टकराने के प्रभाव से बनी एक खगोलीय घटना है।*

Principal Meteor shower dates

Shower Name	Date of Maximum	Normal Limits
Quadrantids	3-4 January	28 Dec-12 Jan
Lyrids	22-23 April	14-30 April
Eta Aquariids	6 May	19 Apr-28 May
Delta Aquariids	30 July	12 July - 23 Aug
Alpha Capricornids	30 July	3 July -15 Aug
Perseids	12-13 August	17 July - 24 Aug
Draconids	8-9 October	6-10 October
Orionids	20-21 October	2 Oct - 7 Nov
Taurids	Southern: 10-11 Oct	Southern: 10 Sep - 20 Nov
	Northern: 12-13 Nov	Northern: 20 Oct - 10 Dec
Leonids	17-18 November	6-30 November
Geminids	14-15 December	4-20 December
Ursids	22-23 December	17-26 December

तालिका-1

इसी तरह से 6 से 30 नवम्बर के बीच भी एक मीटिओर शावर होता है जिसे लिओनिड्स शावर कहते हैं। इसका अधिकतम 17 नवम्बर को होता है। ये लिओ नक्षत्र से आते हुए प्रतीत होते हैं और टैम्पेल-टटल पुच्छल तारे के हिस्से की वजह से होते हैं।

यदि आप इंटरनेट पर थोड़ी खोजबीन करेंगे तो आपको हर महीने दिखाई देने वाली उल्काओं की बारिश की तारीख और उस उल्का-बारिश का नाम आदि पता चल जाएगा। इसकी मदद से आप टूटते तारों की बारिश आसमान के किस हिस्से में दिखाई देगी, यह मालूम कर सकते हैं। इससे सम्बन्धित कुछ जानकारी हम यहाँ भी दे रहे हैं (तालिका 1)।

तो क्यों न आप भी इस बार 13 दिसम्बर की रात को कुदरत के इस करिश्मे का आनन्द उठाएँ। करना सिर्फ इतना भर है कि आप किसी ऐसी जगह खुले में रात बिताएँ जहाँ ज़मीनी रोशनी बिल्कुल न हो और आसमान तारों से भरा हो। यकीनन आप इस अनुभव को भुला नहीं पाएँगे।

और चलते-चलते एक सवाल - क्या टूटता तारा देखते हुए अपनी इच्छा ज़ाहिर करने से वह पूरी हो जाने वाली बात सही हो सकती है? आपको क्या लगता है?

शशि सक्सेना: दिल्ली स्थित दीनदयाल उपाध्याय कॉलेज में रसायनशास्त्र का अध्यापन व विज्ञान शिक्षण को बेहतर बनाने से सम्बन्धित विभिन्न प्रयासों से जुड़ाव।

चित्र: कैरन हैडॉक

पत्तों पर नाग-नागिन

कालू राम शर्मा

बरसात रह-रहकर मगर जमकर बरस रही थी। घरों की हर चीज़ में सीलन आ चुकी थी। चारों ओर डबरे लबालब भरकर बहना शुरू हो चुके थे। जिधर देखो, उधर कीचड़ मचा हुआ था। घनघोर बरसात की वजह से पूरा गाँव एक तरह से सुस्ता रहा था। पशुओं को घर में ही बाँधकर रखा गया था। मेंढकों के टर्राने का शोर दिन में भी सुनाई दे रहा था। एक डबरे में से कोई मेंढक टर्राता, तो दूसरी ओर से और ज़ोर-से दूसरे मेंढक के टर्राने का शोर होता। मानो मेंढकों में टर्राने की प्रतिस्पर्धा चल रही हो। डबरों में उगी हरी घास पर रंगबिरंगे ड्रेगनफ्लाय सुस्ता रहे थे। परिन्दे पेड़ों पर पत्तों की आहट में पनाह पा रहे थे।

भारी बरसात की वजह से गाँव का शहर से सम्पर्क पूरी तरह से टूट चुका था। नाले पर बनाई पुलिया कोई दो साल पहले ही ढह चुकी थी। पुलिया मरम्मत लायक भी नहीं बची थी। पुलिया को नए सिरे से बनाने की माँग की जा रही थी। पिछले दो दिनों से गाँव से दूध ले जाने वाले शहर नहीं जा पाए थे। इस वजह से भट्ठियों में दूध को उबालकर मावा बनाया जा रहा था। गाँव के कई स्त्री-पुरुष और बच्चे बीमारी में जकड़े हुए थे। गनी चाचा के बड़े भाई कँपकँपीदार बुखार में तप रहे थे। भारी बरसात में मरीज़ों को शहर के अस्पताल में ले जाना नामुमकिन था।

हर कोई घर में ही दुबका हुआ था। कुछ खास ज़रूरत पड़ने पर ही लोग-बाग घर से बाहर निकल रहे थे। नारंगी के आँगन में बच्चे चियों के खेल में मशगूल थे। उनके पास इमली के चियों की फाँक बना-बनाकर उनसे खेल खेलने के अलावा और कोई चारा नहीं था। आँगन में एक तरफ

कुत्ता अपने अगले दोनों पैरों को आगे निकालकर, उन पर सिर सटाकर, खेल रहे बच्चों की ओर ताक रहा था। गाँव के पुरुष चौपड़ और ताश के पत्ते खेलकर वक्त काट रहे थे।

नारंगी ने आँगन में से दूर देखा कि हरियाली ही हरियाली छाई हुई है। घर की बाहरी दीवार पर उग आए छोटे-से पौधे पर नारंगी की नज़र पड़ी। उसे छोटे-से पौधे की छोटी-छोटी पत्तियों पर कुछ सफेद-सी, महीन लकीर जैसी आकृतियाँ दिखाई दीं। नारंगी ने झुककर ध्यान से देखा तो उसे लगा कि पत्ती पर मानो नाग फन फैलाए हुए हो। उसने जल्द ही निगाह घुमाई और खेलने में लग गई।

नाग-नागिन की अफवाह

इन दिनों पूरे देश में एक अजीब-सी अफवाह फैली हुई थी कि पौधों की पत्तियों पर नाग-नागिन की आकृति उभर आई है। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि किसी किसान ने नाग-नागिन के एक जोड़े को मार डाला। बस वे नाग-नागिन ही पत्तियों पर प्रकट हुए हैं। अफवाह ने कुछ ऐसा ज़ोर पकड़ा कि सब्ज़ी-बाज़ार में हरी सब्ज़ियों की कीमतें औंधे मुँह गिर गईं। जैसे-जैसे अफवाह फैलती गई, लोगों ने हरी सब्ज़ियाँ, खासकर पत्तेदार सब्ज़ियाँ खाना और खरीदना बन्द कर दीं। जो लोग ऐसी बातों पर यकीन नहीं करते थे, वे एक-दूसरे से पूछते कि आखिर मामला क्या है।

उधर अखबारों में भी ऐसी खबरें छपने लगीं। खबर के मुताबिक एक राज्य में एक छोटी-सी बात ने राई का पहाड़ बना डाला। लोगों में यह अफवाह फैली कि नाग देवता ने टमाटर और पालक की पत्तियों पर उभरकर एक नए अवतार का रूप धारण किया है। कुछ ने तो यहाँ तक कहानी गढ़ ली कि किसी ने एक नाग को मारकर पेड़ों पर फेंक दिया था इसलिए नाग देवता नाराज़ होकर बदला ले रहे हैं।

कई तरह की बातें हो रही थीं। कई तरह के अनुमान लगाए जा रहे थे। राज्यसभा में सवाल पूछा गया, "सरकार अफवाह को रोकने के लिए क्या कदम उठा रही है?" एक सांसद ने बताया कि उनके राज्य में इस अफवाह का व्यापक असर हुआ है। गाँवों में लोगों ने हरी सब्ज़ियाँ खाना छोड़ दिया है। ऐसे में महिलाओं की हालत और भी खराब है। महिलाओं को तो वैसे भी पर्याप्त और पौष्टिक खाना उपलब्ध नहीं होता।

मगर गाँव के अधिकांश लोग इन अफवाहों और खबरों से अछूते थे।

साँप जैसी आकृति?

भारी बरसात की वजह से स्कूल की छुट्टी हो गई थी। मटके में रखे हुए मेंढक के टेडपोल के अवलोकन के लिए नारंगी और उसके साथी दिन में एक बार स्कूल ज़रूर जाते।

एक हाथ में हैंडलेंस लिए और दूसरे हाथ से टाट की बोरी को अपने सिर पर डाले हुए नारंगी स्कूल जा रही थी। इसरार, लच्छू और डमरू भी पीछे-पीछे आ रहे थे। स्कूल के पास बागड़ में नारंगी की नज़र पड़ी तो वहीं ठिठककर रुक गई और पत्तियों को देखने लगी। उसने देखा कि हरी-हरी पत्तियों पर वैसी ही नाग की आकृतियाँ बनी हुई हैं जैसी उसने उसके घर की दीवार पर छोटे-से पौधे पर देखी थीं। जितनी बड़ी पत्ती, उस पर उतनी ही बड़ी आकृति। किसी-किसी पत्ती पर तो एक से ज़्यादा आकृतियाँ।

अब तक इसरार, लच्छू और डमरू भी उसके नज़दीक आ चुके थे। नारंगी धीरे-से बोली, "देख रहे हो?"

"अब पत्तियों को क्या देखना। पत्ती वाला पाठ तो पूरा हो गया है।" लच्छू अपनी दोनों हथेलियों को आपस में बाँधकर उसमें अपनी साँस फूँक रहा था।

"अरे, मैं पत्ती पर साँप जैसी आकृतियों की बात कर रही हूँ।" नारंगी थोड़ा चिढ़कर बोली।

"अच्छा, तो पत्तों पर नाग महाराज आकर बैठ गए।" डमरू बोला।

"देख, साँप जैसी लकीरें तो दिख रही हैं ना? ये देख ना, इस टमाटर के पौधे की झालरदार पत्तियों पर कितने साँप बन गए हैं। मास्साब भी तो कहते हैं कि किसी भी चीज़ का अच्छे से अवलोकन किया करो। तो अपन अवलोकन ही तो कर रहे हैं।"

"ये टमाटर यहाँ बागड़ में क्या कर रहा है?" इसरार बोला।

चित्र: रंजित बालमुचु

डमरू बोला, "टमाटर हर कहीं उग आता है। अगर इस बागड़ में देखोगे तो और भी टमाटर मिल जाएँगे।"

"मगर सभी पत्तियों पर तो ऐसी लकीरें नहीं बनी हैं। देखो, ये बेशरम के पत्ते तो साबुत ही हैं। और वो देखो, पीपल के पत्ते भी एकदम साफ हैं।" इसरार ने उँगली से इशारा करते हुए बताया।

वहीं स्कूल में...

स्कूल में मास्साब फाइलों में उलझे हुए थे। बीच-बीच में वे अपनी झबरीली और आधी काली, आधी सफेद मूँछों पर हाथ फेरते हुए कुछ सोचते हुए दिख रहे थे। उन्होंने नारंगी और उसकी टोली के साथियों को बागड़ के पास कुछ करते हुए देख लिया था।

नारंगी सहित सभी बच्चे स्कूल के बरामदे में आ चुके थे। स्कूल में आकर वे मटके में मेंढक के जीवन-चक्र के सेट किए प्रयोग के अवलोकन में जुट गए। अब तक अण्डों में से टेडपोल निकल आए थे। टोली के लोग देख रहे थे कि मटके में बीच में पत्थरों से बनाए टीले पर टेडपोल आ-आकर आराम फरमाते और फिर से तैरने लग जाते।

बच्चों का यह रोज़ का ही काम था। मेंढक के अण्डों में से निकले टेडपोल में होने वाले बदलावों के चित्र बनाना तथा उनको नोट करने का यह कार्य कोई एक महीने से चल रहा था। चाहे स्कूल की छुट्टी हो, मगर बच्चे अपनी-अपनी टोलियों में अवलोकन ज़रूर करते।

नारंगी ने सोचा कि अभी कोई फटाफट मेंढक बनने वाले तो हैं नहीं, बाद में भी अवलोकन किया जा सकता है।

वह वहाँ से उठी और फिर से बागड़ तक जाकर नाग वाली पत्तियाँ तोड़कर ले आई।

"देखो, वो पत्ती तोड़कर ले आई। अब वो सीधे मास्साब के पास ही जाएगी।" इसरार का अन्दाज़ा सही निकला।

"मगर इसमें कौन-सी नई बात है।" लच्छू टालते हुए बोला।

"मास्साब देखो, पत्ती पर नाग! ये तो बिना हैंडलेंस के ही साफ दिख रहा है।" नारंगी बोली।

मास्साब ने हमेशा की तरह किया, "हूँह..."

मास्साब के चेहरे पर अचरज के भाव थे। उन्होंने पत्ते को हाथ में लेते हुए उसको उलट-पलटकर देखा, "तो अब ये देखने की कोशिश करो कि आखिर यह मामला क्या है। क्या वजह हो सकती है इन आकृतियों की?" मास्साब मूँछों में से मन्द-मन्द मुस्कराते हुए बच्चों की हौंसला-अफज़ाई करने के अलावा कुछ ज़्यादा मदद और सुझाव देने की स्थिति में नहीं थे। दरअसल, मास्साब ने हाल ही के अखबार में पत्तों पर नाग-नागिन की खबरें ज़रूर पढ़ी थीं। परन्तु उन्हें कुछ भी नहीं सूझ रहा था। वे बच्चों की कुछ भी मदद करने की स्थिति में नहीं थे।

इतना कह मास्साब फिर से फाइलों के काम में मशगूल हो गए।

"मास्साब कभी भी जवाब नहीं देते। वे तो सब कुछ अपने पर ही छोड़ देते हैं।" इसरार खीजकर बोला।

बच्चे मास्साब के इस तरीके को

समझ चुके थे। वे जानते थे कि मास्साब सवाल का जवाब नहीं देते। इसके पीछे के कारण तो वे नहीं जानते थे मगर वे मास्साब की इस अदा के दीवाने ज़रूर हो गए थे। चन्दू बोला, "ये तो मास्साब का स्टाइल है।"

"तो फिर अपुन का भी स्टाइल छानबीन करना है। अपुन भी इसकी छानबीन करके ही दम लेगा।" नारंगी रोष में आकर बोली।

घर में अवलोकन

नारंगी घर आ चुकी थी। घर की कच्ची दीवार पर उगे पौधे को जब नारंगी ने देखा तो उस पौधे का ठूँठ ही बचा था। वह मन ही मन बुदबुदायी, "बकरी को भी इसी पौधे को चरना था।"

नारंगी ने सोचा कि बड़ी पत्तियों पर अवलोकन करना ज़्यादा अच्छा होगा। उसने बाड़े में जाने के लिए पीछे का दरवाज़ा खोला मगर वहाँ कीचड़ मचा हुआ था। कीचड़ की वजह से उसने तय किया कि वह पौधों और उनकी पत्तियों को दरवाज़े में खड़े होकर ही देखेगी। उसके सामने धतूरे का पौधा था। पूरे पौधे पर पानी की बूँदें जमी हुई थीं जो मोतियों का एहसास करा रही थीं। धतूरे के सफेद फूलों को जब देखा तो उसको ऐसा लगा मानो वे उसकी ओर देखकर मुस्करा रहे हों। दरवाज़े की दहलीज़ पर बैठकर, आगे की ओर झुककर, उसने धतूरे की पत्तियों को छूने की कोशिश की। वह पूरी तरह से झुक गई। धतूरे की पत्तियों को बहुत ध्यान-से देखने की ज़रूरत नहीं पड़ी। उसे साफ तौर पर पत्तियों पर सर्पाकार आकृतियाँ बनी हुई दिखाई दे रही थीं।

उसने धतूरे की एक पत्ती को तोड़ा और पिछवाड़े के दरवाज़े को बन्द कर कुण्डी लगा दी।

अब नारंगी पत्ती लेकर आँगन में आ चुकी थी। उसके पिताजी खटिया पर लेटे हुए थे। उन्होंने नारंगी के हाथ में पत्ती को देखकर कहा, "वैज्ञानिक साहिबा, इस धतूरे की पत्ती में ऐसा क्या है जो इसे लेकर यहाँ-वहाँ घूम रही हो?"

नारंगी अपने पिताजी का व्यंग्य सुनकर सकपका गई। वह मन ही मन कह रही थी कि बड़े लोग अपने आपको समझते क्या हैं। उनको लगता है कि बच्चे तो नासमझ ही होते हैं।

करवट बदलते हुए नारंगी के पिताजी ने सामने के घर के आँगन में खटिया बुन रहे गनी चाचा को ज़ोर-से आवाज़ लगाकर बोला, "पत्तों पर बवाल मचा हुआ है। राज्यसभा तक में पत्तों पर बात कर रहे हैं।"

गनी चाचा और नारंगी के घर में दस फीट की गली का ही फासला था। गनी चाचा ने उधर से कहा, "सुना है, अखबारों में खबरें ज़ोर-शोर

से छप रही हैं। बाज़ार में पत्तेदार सब्ज़ियों के भाव बुरी तरह से गिर गए हैं।"

"अच्छा..." गनी चाचा की बात सुनकर नारंगी के पिताजी खटिया पर बैठ गए।

"ऐसा कोई पहली बार तो नहीं हुआ। ये तो पत्तों की बीमारी है। कुछ भी कहो, लोगों ने पत्तेदार सब्ज़ियाँ खाना बन्द कर दी हैं।" गनी चाचा अपने घर के आँगन में काम में मशगूल हो बातचीत किए जा रहे थे।

छत के खपरैलों से आँगन के बाहर गली में टपक रहे पानी की बूँदों में नारंगी ने धतूरे की पत्ती को ठीक-से धोकर देखा कि कहीं ऐसा तो नहीं कि बाहर से कोई दाग लग गए हों। उसे पक्का हो गया कि पत्ती में अन्दरूनी ही कोई बात हुई है।

नारंगी सोच में डूबी हुई थी। सभी पत्तियों में तो ऐसे कोई निशान नहीं हैं। कुछ तो साफ-सुथरी ही थीं। फिर उसने बाड़े में लगे अकाव की मोटी पत्तियों पर ऐसी कोई आकृतियाँ या निशान नहीं देखे थे।

वह बुदबुदाई, "क्यों न गनी चाचा से बात की जाए।"

गनी चाचा की मदद

अब तक लच्छू और इसरार भी आ चुके थे। तीनों गनी चाचा के पास पहुँच गए। उनकी खटिया बुनने का काम भी लगभग पूरा हो चुका था। बरसात बन्द हो चुकी थी मगर आसमान में बादल दौड़ लगा रहे थे। नीला आसमान कहीं-कहीं दिखता और फिर से बादल उसको ढँक लेते।

गनी चाचा उसी खटिया पर बैठ गए जिसको अभी-अभी रस्सी से बुना था। चाचा ने उन तीनों को भी खटिया पर बिठा लिया।

गनी चाचा तीनों बच्चों से ऐसे बात कर रहे थे मानो वे उनकी बराबरी के हों। "देखो, रेडियो में जो खबर आई है, उसके हिसाब से तो हालात खराब ही हैं। शहरों में तो हर घर में यही चर्चा हो रही है कि पत्तियों पर नाग-नागिन बने हुए हैं।"

गनी चाचा थे तो कम पढ़े-लिखे मगर दिमाग बड़ा तेज़-तर्रार था। वे बातों के धनी थे। छोटे से लेकर बड़ों से बड़ी तहज़ीब से पेश आते। उनका सोचने का ढंग भी निराला था। दुनिया से परे हटकर वे सोचते। इसकी चिन्ता किए बगैर कि लोग-बाग क्या कहेंगे, अपनी बात बेबाक तरीके से कहते। कई बार लोगों को गनी चाचा की बात करेले-सी कड़वी लगती मगर फिर भी लोग उन्हें और उनकी नसीहतों को सुनने को बेताब रहते।

"तो तुम ऐसा करो कि अपने आसपास की पत्तियों के अन्दर देखो कि आखिर साँप जैसे निशान किस चीज़ के हैं।" गनी चाचा की बात तीनों को सुहानी लगी।

नारंगी बोली, "अब तक तो हमने

पत्तियों को बाहर से ही अच्छे से देखा है...।"

"तो क्या करें अब...?" तीनों बच्चों के मुँह से एक ही सवाल निकला।

नारंगी सोचते हुए बोली, "ऐसा करते हैं कि पत्ती के अन्दर खोदकर देखते हैं।"

गनी चाचा कुछ गुनगुना रहे थे - "तू कहता कागद की लेखी, मैं कहता आँखन देखी..."

चित्र: रंजित बालमुचु

चाचा ने गुनगुनाना बन्द किया और बोले, "सूई चाहिए तो तुम्हारी चाची से ले लो। मगर हाँ, इस बात का खयाल रखना कि सूई लौटा ज़रूर देना। क्योंकि तुम्हारी चाची का तो खास हथियार है - सूई।"

नारंगी मुँह बनाकर बोली, "अब चाचा रहने भी दीजिए। हम इतने भी छोटे नहीं कि चाची की सूई को गुमा देंगे।"

गनी चाचा को एहसास हुआ कि नारंगी को बुरा लग गया। उन्होंने सफाई देना चाही तब तक तो नारंगी चाची की ओर सूई लेने को दौड़ पड़ी।

सच्चाई के नज़दीक

उजाले में बैठकर नारंगी पत्ती को एक हाथ में पकड़कर सूई से कुरेद रही थी। आसपास लच्छू और इसरार हैंडलेंस लेकर झुककर बैठे हुए थे। तीनों ने मिलकर देखा कि जहाँ-जहाँ सफेद-सी लकीर बनी हुई है, उस पर एक महीन-सी फिल्म जैसी परत है। पत्ती पर सर्पाकार आकृति के पूँछ वाले सिरे से आगे की ओर कुरेदा गया। नारंगी नाग के फन तक कुरेदते हुए आ गई। इसरार ने हैंडलेंस सेट किया हुआ था।

"कुछ तो भी दिख रहा है। ऐसा लग रहा है कि कोई कीड़ा हो।" इसरार बोला।

"तो असलियत कुछ और ही है।" नारंगी बोली।

"तो हम सच्चाई के बहुत नज़दीक हैं।" लच्छू बोला।

"हमको स्कूल में रखे माइक्रोस्कोप में देखना चाहिए।" हैंडलेंस को साफ करके जेब में रखते हुए इसरार बोला।

कुरेदी हुई धतूरे की पत्ती की

नारंगी ने पुड़िया बना ली और अपनी फ्रॉक की बगल वाली जेब में रख ली।

“तो हमको अब फिर से स्कूल में चलना चाहिए। मास्साब अभी स्कूल में कागज़ों के काम में ही लगे होंगे।” नारंगी बोली।

इसरार ने सुझाया, “क्यों न भागचन्द्र और डमरू को भी बुला लिया जाए।”

“हाँ, तो हम इधर से जल्दी-जल्दी स्कूल पहुँचते हैं। तब तक तुम भी पहुँचो।” लच्छू बोला।

“अरे हाँ, उधर से पत्तों को तोड़ते हुए आना।” लच्छू चिल्लाकर बोला।

फिर एक बार स्कूल में

नारंगी और लच्छू कीचड़ में लथपथ होकर स्कूल पहुँचे। उन्होंने रास्ते में से नाग की आकृति वाली अलग-अलग पत्तियों को तोड़ लिया था।

मास्साब अपने सभी कागज़ और फाइलों को समेट रहे थे। बच्चों को स्कूल की ओर आते देखकर उन्होंने सोचा कि अब कुछ देर के लिए रुकना भी पड़ सकता है।

“क्या बात है? इस वक्त क्यों मस्ती कर रहे हो?” मास्साब फाइलों को लोहे की पेटी में रखते हुए बोले।

“मास्साब! पत्ती के बारे में आपसे बात करनी है।” नारंगी बोलते हुए स्कूल के गेट की ओर देख रही थी जहाँ इसरार, डमरू और भागचन्द्र आते दिखाई दे रहे थे।

“ओहो, तो पूरी टीम ही यहाँ है।” मास्साब फिर से कुर्सी पर बैठ गए।

चित्र: रंजित बालमुचु

“गनी चाचा और मेरे पिताजी तो बातें कर रहे थे कि पत्तियों के बारे में राजनीति हो रही है। लोगों ने सब्ज़ी खाना बन्द कर दिया है।” नारंगी ने एक ही साँस में वह सब बोल दिया जो उसकी समझ में आया था।

मास्साब को ज़ोर की हँसी आ गई। नारंगी को लगा कि कहीं मास्साब उस पर तो नहीं हँस रहे हैं।

मास्साब सफाई देते हुए बोले, "माफ करना नारंगी, मैं तुम पर नहीं हँस रहा हूँ। असल में, गनी चाचा और तुम्हारे पिताजी ठीक ही कह रहे हैं।"

नारंगी ने अपनी फ्रॉक की बगल वाली जेब में से पत्ती की पुड़िया निकालकर खोली। मगर वह बारीक-सी चीज़ उसमें नहीं थी जो उसने सूई से कुरेदकर निकाली थी। नारंगी ने जेब में हाथ डाला और जेब के कोनों में नाखूनों से खुरचने लगी। उसके नाखूनों में कुछ धागों के रेशे ही आए। ज़ाहिर है कि वह कुरेदी हुई चीज़ अत्यन्त ही सूक्ष्म थी।

नारंगी निराश होकर बोली, "हमने पत्ती में सूई से कुरेदकर देखा था। वो तो कहीं गिर गया।"

मास्साब बोले, "कोई बात नहीं। किसी दूसरी पत्ती में कुरेदकर देख लिया जाए। ऐसा तो होता रहता है।"

पत्ती की गुत्थी

लच्छू, नारंगी, इसरार, डमरू, भागचन्द्र और मास्साब नीचे फर्श पर सूखी जगह देखकर बैठ गए। माइक्रोस्कोप निकाला जा चुका था। पाँचों बच्चे और मास्साब खुद भी पत्तियों को अलग-अलग कुरेद रहे थे। भागचन्द्र और डमरू मास्साब की ओर देख रहे थे कि वे पत्ती को कैसे कुरेद रहे हैं।

मास्साब भागचन्द्र और डमरू की ओर देखकर बोले, "देखो, ईमानदारी की बात यह है कि मैं भी तुम जैसा ही हूँ। पहली ही बार यह प्रयोग कर रहा हूँ। तुम तो बड़े किस्मत वाले हो कि इस तरह के प्रयोग करने का मौका मिला है। मुझे तो ऐसा मौका अपने बचपन में कभी नहीं मिला। तो तुम मुझसे ज़्यादा होशियार हो।"

थोड़ा रुककर मास्साब फिर से बोले, "हालाँकि नारंगी, लच्छू और इसरार हमसे कहीं ज़्यादा होशियार हैं। इन्होंने तो एक बार अपने घर पर भी पत्ती को कुरेदकर देखा है।"

नारंगी ने बताया, "हमने पत्ती पर बने साँप की पूँछ की ओर से कुरेदना शुरू किया था, और धीरे-धीरे आगे की ओर बढ़ते गए।"

मास्साब बोले, "गुड!"

मास्साब की देखा-देखी भागचन्द्र भी बोला, "गुड!"

लच्छू के पास कुरेदने के लिए सूई नहीं थी। उसने सोचा कि क्यों न अलमारी में किट में रखे हुए बबूल के काँटे से यह काम किया जाए। दरअसल, होविशिका में बबूल के काँटे का फूल के विच्छेदन में इस्तेमाल, एक बड़ी खोज थी। जब स्कूलों में शिक्षक और बच्चों को सूई या आलपीन आदि उपलब्ध नहीं हो रही थी, ऐसे में एक बच्चे ने काँटे से फूल का विच्छेदन कर नवाचार कर डाला था। बबूल का काँटा सूई से भी ज़्यादा कारगर होता है।

भागचन्द्र चिल्लाया, "अरे देखो, ये

रहा कीड़ा!" पास में बैठे हुए मास्साब बोले, "इस बारीक-सी चीज़ को, जिसको तुम कीड़ा कह रहे हो, इसे धीरे-से काँच की पट्टी पर रखो और फिर माइक्रोस्कोप में सेट करके देखो।"

उधर से गनी चाचा लाठी के सहारे स्कूल में आकर मास्साब के बगल में बैठ चुके थे। बूढ़े गनी चाचा बच्चों को काम करते हुए बड़े ध्यान से देख रहे थे। और उनकी बातों को गौर से सुन रहे थे।

भागचन्द्र खुशी के मारे हाँफ रहा था। उसने देखा कि कुछ धागे-सा दिखाई दे रहा है। अब लच्छू अपनी काँच की पट्टी को माइक्रोस्कोप में देखते हुए बोला, "धागे जैसा ही कुछ दिख रहा है।" बारी-बारी से सभी ने सच्चाई अपनी आँखों से देख ली थी।

"वैसे इसकी लम्बाई कितनी होगी?" इसरार ने पूछा।

"नापकर देख लो न।" भागचन्द्र ने जवाब दिया।

इसरार ने बड़े ही प्यार से कहा, "मुझे पता है। मैं तो केवल सवाल उठा रहा हूँ। और मैं यही करने जा रहा हूँ।"

इसरार ने ग्राफ पेपर पर कीड़े को धीरे-से रखा और उसको हैंडलेंस से देखने लगा। कीड़ा अभी भी कुलबुला रहा था। कीड़े को नापना मुश्किल हो रहा था। असल में वह ग्राफ पेपर पर अपने को पूरा-का-पूरा समेट लेता। बहुत मशक्कत के बाद इसरार ने देखा कि वह लगभग एक-डेढ़ मिलीमीटर का होगा।

सुलझते धागे

मास्साब ने अपने हाथ में से पत्ती और सूई को नीचे रखा, और बच्चों की ओर मुखातिब होकर बोले, "अगर अब तुमसे इस पूरे मामले में कोई पूछे तो तुम्हारा मत क्या होगा?"

भागचन्द्र बोला, "ऐसा क्यों होता है कि हमारे यहाँ पर बिना देखे-परखे कोई भी कुछ भी कह देता है?"

नारंगी बालों की लट को उँगली में लपेटकर बाहर की ओर देख रही थी। लच्छू बोला, "तो ये तो कीड़े का कमाल है। मगर ऐसी, नाग जैसी आकृति क्यों बन रही है?"

"हाँ, यही सवाल मैं भी पूछना चाह रहा था।" इसरार बोला।

"मेरे मन में तो यह सवाल उठ रहा है कि आखिर ये कीड़ा पत्ती के अन्दर कैसे घुसता होगा?" डमरू बोला।

नारंगी का भी एक सवाल था, "हर कहीं इतना हंगामा हो रहा है तो बड़ी-बड़ी संस्थाओं में बैठे हुए लोग कुछ करते क्यों नहीं?"

मास्साब बच्चों के सवालों को बड़े ही ध्यान से सुन रहे थे। स्कूल के बरामदे में अचानक ही चुप्पी छा गई थी। कई सारे सवाल वहाँ तैर रहे थे।

मास्साब ने बड़ी विनम्रता से कहा,

चित्र में कीड़े का आकार काफी बड़ा करके दिखाया गया है।

"देखो, अब इन सब सवालों के जवाब तुम्हारी किताबों में मिलने वाले नहीं हैं। और असल बात तो यह है कि मुझे भी पता नहीं हैं। इनके बारे में हम सबको सोचना होगा। जब हम किसी समस्या के बारे में ठीक-से और हिम्मत-से सोचते हैं तो चाहे जवाब न मिले, मगर उसके हल की ओर हम आगे बढ़ पाते हैं।"

वहाँ एक बार फिर से चुप्पी छा गई थी।

अब नारंगी बोलने को उतावली हो रही थी, "कीड़ा पत्ते के हरे रंग को ही खाता होगा। और खाते हुए आगे को खिसकता होगा। जैसे-जैसे आगे खिसकता जाता है वैसे-वैसे बड़ा होता जाता होगा। इसीलिए आखिरी में पत्ती पर लकीर चौड़ी हो जाती है।"

मास्साब खुश होकर बोले, "करेक्ट! ऐसा ही होगा। तुम बिलकुल सही सोच रही हो।"

डमरू ने पूछा, "तो क्या पत्तों पर नाग इसी साल हुए हैं या पहले भी होते थे? अगर पहले भी होते थे तो इसी साल इतनी अफवाह क्यों उड़ी?"

मास्साब बोले, "देखो, मेरा मानना है कि पत्तों पर हर साल ही ऐसी आकृतियाँ बनती होंगी। इस साल कुछ ज़्यादा ही पत्तों पर इन कीड़ों का असर हुआ है। इसकी कोई वजह हो सकती है। हो सकता है कि इस बार का मौसम कीड़ों को ज़्यादा सुहाना लग रहा हो।"

लच्छू को लगा मानो मास्साब कीड़ों की तरफदारी कर रहे हैं।

इसरार बोला, "इसका मतलब यह कि इस बरसात में कीड़े अधिक पनपे?"

"हाँ, ठीक कह रहे हो।" मास्साब बोले।

नारंगी बोली, "तो इस वजह से सब्ज़ी खाना बन्द ही कर देना ठीक है?"

गनी चाचा बीच में ही बोले, "नहीं, बिलकुल नहीं। इतना किया जा सकता है कि उन पत्तों को फेंक दिया जाए जिन पर कीड़े लगे हुए हैं। लोगों ने तो गिलकी, तुरई और दूसरी

सब्ज़ियों को खाना भी बन्द कर दिया है, जो गलत है। कल तक हमारे यहाँ भी अखबार आ जाएगा। और फिर अपने गाँव में भी इसी तरह की बातें होने लगेंगी। तो, तुम इस बात के लिए तैयार रहना कि असलियत बता सको।"

मास्साब ध्यानमग्न हो गए थे कि यह सब कुछ इस 'करके सीखने' वाले विज्ञान की ही देन है कि बच्चों ने पत्तों की बीमारी का राज़ पता कर लिया। यह वैसा ही काम किया जो किसी बड़े संस्थान के विशेषज्ञ करते हैं। बस फर्क इतना ही होता है कि उनको उस कीड़े और बीमारी के वैज्ञानिक पहलुओं के बारे में विस्तार से पता होता है। उन्हें उनके जीव वैज्ञानिक नाम पता होते हैं।

मास्साब का ध्यान टूटा। "अच्छा, एक काम तुम सभी मिलकर करो। इस अफवाह का भण्डाफोड़ करने वाली एक खबर खुद ही बनाओ। जो भी तुमने खोजबीन की, उसे लिखो। तुम यह मानकर लिखना कि मानो वह खबर अखबार में ही छपने वाली हो।"

सभी बच्चे एक-दूसरे के मुँह की ओर ताक रहे थे। उनके पास कुछ भी बोलने को शब्द नहीं थे।

गनी चाचा ने हौंसला बँधाया, "अरे, घबराना क्यों? गलती हो जाए तो मास्साब हैं तो। और फिर जब नारंगी और तुम जैसे बच्चे अगर असलियत का पता लगा सकते हो, तो कागज़ पर लिखना कौन-सी बड़ी बात है?"

मास्साब ने मन ही मन तय कर लिया था कि वे बच्चों द्वारा किए गए अनोखे कार्य का उल्लेख मासिक बैठक में ज़रूर करेंगे।

बरसात थमती दिख रही थी। हवा तेज़ हो चली थी। काले-भूरे बादलों के पर्दे पर सफेद बगुले पंखों को फैलाकर उड़ रहे थे। हवा के तेज़ झोंके बरसाती बूँदों को छितर-बितर करने में कामयाब हो रहे थे। बच्चों के चेहरों पर चमक थी। बच्चे, गनी चाचा और मास्साब घर की ओर रवाना हो गए।

कालू राम शर्मा (1961-2021): अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, खरगोन में कार्यरत थे। स्कूली शिक्षा पर निरन्तर लेखन किया। फोटोग्राफी में दिलचस्पी। *एकलव्य* के शुरुआती दौर में धार एवं उज्जैन के केन्द्रों को स्थापित करने एवं मालवा में विज्ञान शिक्षण को फैलाने में अहम भूमिका निभाई।

पत्तियों पर साँप!

साँप नहीं, एक छोटे-से कीड़े की चाल

पिछले लेख में कालू राम शर्मा द्वारा होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम पर लिखी गई शृंखला का वह हिस्सा था जिसमें मास्साब और बच्चे पत्तियों पर बनने वाले नाग-नागिन की खोजबीन करते हैं। इसी से सम्बन्धित एक लेख *चकमक* पत्रिका के अंक अक्टूबर, 1991 में भी प्रकाशित किया गया था जिसे आपके साथ साझा कर रहे हैं।

पिछले दिनों चारों तरफ एक अजीब-सी अफवाह फैली हुई थी कि पौधों की पत्तियों पर नाग-नागिन की आकृति उभर आई है। और वह इसलिए हुआ है क्योंकि किसी किसान ने नाग-नागिन के एक जोड़े को मार डाला। बस, वे ही नाग-नागिन पत्तियों पर उभर आए हैं। अफवाह ने कुछ ऐसा ज़ोर पकड़ा कि सब्ज़ी बाज़ार में हरी सब्ज़ियों के दाम गिर गए। लोग हरी सब्ज़ियाँ, खासकर पत्तेदार सब्ज़ियाँ, खरीदने से हिचकने लगे। जो लोग ऐसी बातों पर यकीन नहीं करते थे, वे एक-दूसरे से पूछते, "आखिर मामला क्या है?"

उधर अखबारों में भी इससे सम्बन्धित दिलचस्प खबरें छपने लगीं। ऐसी ही एक खबर के अनुसार

पिछले दिनों हैदराबाद के लोगों ने एक छोटी-सी बात को राई का पहाड़ बना डाला। लोगों में यह अफवाह खूब फैली कि साँप/नाग देवता ने टमाटर और पालक के पत्तों पर उभरकर एक नए अवतार का रूप धारण किया है। कुछ ने तो यहाँ तक कहानी गढ़ ली कि किसी ने एक नाग या कोबरा मारकर पेड़ पर फेंक दिया था, इसलिए देवता नाराज़ होकर बदला ले रहे थे।

तरह-तरह के अनुमान लगाए जाने लगे। बात इतनी बढ़ गई कि राज्यसभा में पूछा गया, "सरकार अफवाह को रोकने के लिए क्या कदम उठा रही है?" सवाल पूछने वाले सांसद राजस्थान के थे। उनका कहना था, "राजस्थान में इस अफवाह का व्यापक असर हुआ है। गाँवों में लोगों ने, खासकर महिलाओं ने, हरी सब्ज़ियाँ खाना छोड़ दिया है। वैसे ही उन्हें जो खाना मिलता है, वह बहुत पौष्टिक नहीं होता।" संयोग से इसी बीच 'नागपंचमी' का त्यौहार भी था, इससे अफवाह को और अधिक बल मिला।

खरगोन ज़िले के आदिवासी बहुल इलाके में रहने वाले हमारे एक मित्र ने बताया कि वहाँ नाग को भीलटदेव के नाम से पूजा जाता है। हर साल नागपंचमी पर नागमन्दिरों में पूजा-अर्चना होती है। लोग अपनी श्रद्धा और हैसियत के मान से चढ़ावा चढ़ाते हैं। पर इस बार वहाँ एक नई बात देखने में आई। पूजा-अर्चना करने वाला हर व्यक्ति कुछ और चढ़ाए या न चढ़ाए, नारियल ज़रूर चढ़ाना चाहता था। उधर बाज़ार से नारियल जैसे गायब हो गए। मौके का फायदा दुकानदारों ने उठाया। नारियल दुगने दामों पर बिके। हमारे मित्र का कहना था कि यह सब उसी अफवाह का असर था। हर व्यक्ति नागदेवता को खुश करना चाहता था। और शायद किसी ने अफवाह में यह और जोड़ दिया होगा कि नारियल ज़रूर चढ़ाना।

शाकाहारी 'नागिन'

पिछले पखवाड़े अफवाह उड़ी कि एक नागिन ने अपने नाग की हत्या का बदला लेने के लिए तोरी, घीया और पालक जैसी सब्ज़ियों को ज़हरीला कर दिया है। बात की शुरुआत हुई सब्ज़ियों के पत्तों पर साँप जैसी लहरदार सफेद रेखाओं के उभरने से। एक किस्सा यह रहा कि एक नाग को सब्ज़ियाँ ले जाने वाले ट्रक ने कुचल दिया। इसका बदला उसकी 'इच्छाधारी' नागिन ने इस तरह से लिया। पर असल में मौसम में हुए बदलाव से और कुछ अन्य कारणों से एक ऐसे कीड़े ने सब्ज़ियों पर धावा बोल दिया, जिसके एक-डेढ़ मि.मी. आकार वाले लार्वा पत्तों में घुसकर उन्हें अन्दर से खा जाते हैं और एक लहरदार खोखली रेखा बना देते हैं। जो लार्वा के बढ़ने के साथ-साथ नाग की तरह चौड़ी होती जाती है।

- 'इंडिया टुडे' अक्टूबर, 1991 से साभार

इन्दौर के एक मौहल्ले में इस अफवाह ने और भी गुल खिलाए। वहाँ यह अफवाह थी कि जिन पत्तों पर अभी ऐसी कोई आकृति नहीं दिख रही है, उन पर नागपंचमी को नाग-नागिन दिखाई देंगे। हमारी परिचित धार की एक शिक्षिका ने, जो इन्दौर की रहने वाली हैं, यह बताया। उन्होंने आसपास के लोगों को समझाने का प्रयास भी किया, कि ऐसी कोई बात नहीं है, यह निरी अफवाह है। पर किसी ने उनकी बात पर ध्यान नहीं दिया।

धार लौटकर उन्होंने स्कूल में अपनी कक्षा की छात्राओं से इस पर चर्चा की। छात्राओं ने कहा, "हाँ, हमने तो यह भी सुना है कि गिलकी की सब्ज़ी खाने से एक व्यक्ति की मौत भी हो गई है। गिलकी के पत्तों पर भी नाग-नागिन की आकृति देखी गई थी।" शिक्षिका ने छात्राओं को समझाया कि ऐसा कुछ नहीं है। उस व्यक्ति का मरना एक संयोग मात्र हो सकता है। इतना ही नहीं, अगले दिन वे छात्राओं को लेकर आसपास के पेड़-पौधों की पत्तियाँ देखने निकल पड़ीं। उन्होंने पत्तियाँ इकट्ठा कीं। उन पर सचमुच साँप जैसी आकृतियाँ बनी हुई थीं। कक्षा आठवीं की एक छात्रा ने सूखी पत्ती पर बनी एक आकृति को सुई से कुरेदना शुरू किया और थोड़ी ही देर बाद उसने मरा हुआ एक कीड़ा बाहर निकाला। वास्तव में, उस कीड़े की वजह से ही पत्ती पर एक सर्पाकार आकृति बन गई थी। शिक्षिका ने छात्राओं से कहा, "तुमने देखा असलियत क्या है!" लड़कियों का जो जवाब था, वह भी इतना ही विस्मित करने वाला था। उन्होंने बताया, "हमारी बात मानता कौन है? घर वाले कहते हैं पढ़ने क्या

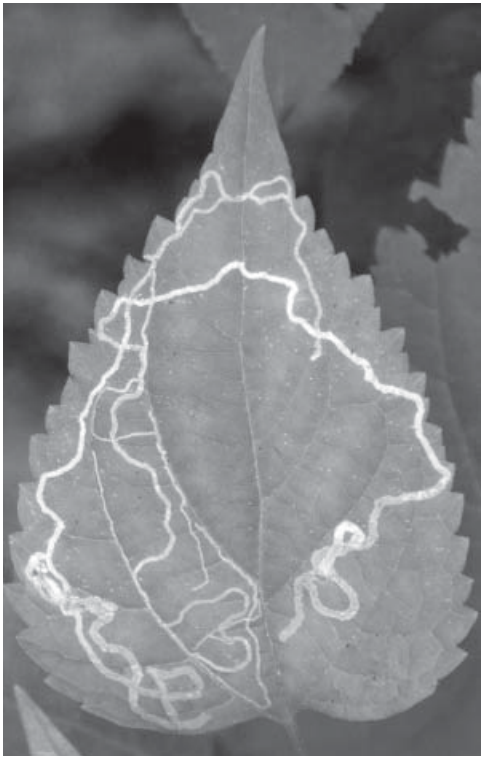

चित्र-1

चित्र-2: *पत्ती के अन्दर रहने वाला कीड़ा*

लगी हो, अपने को ज़्यादा होशियार समझती हो।" खैर...

असल में अफवाह तो फैलती ही इस तरह है, जितने मुँह उतनी बातें। घटना शायद छोटी-सी और सामान्य थी, पर उसमें इतना नमक-मिर्च लग गया कि वह हौवा बन गई।

जिसे घटना कहा जा रहा है, वह मात्र इतनी-सी बात है कि कई पौधों के पत्तों पर सफेद धारियाँ-सी नज़र आ रही हैं। ये देखने में ऐसी लगती हैं कि जैसे साँप की आकृति हो।

हमने और हमारे कुछ साथियों ने भी इस बारे में खोजबीन की। जो तथ्य सामने आए, उनके बारे में बताते हैं।

वास्तव में, ये आकृतियाँ, पत्ती खाने वाला कीड़ा बनाता है। कीड़ा इतना छोटा और बारीक होता है कि वह पत्ती की ऊपरी सतह को छेदकर पत्ती के अन्दर घुस जाता है, और फिर अन्दर-ही-अन्दर उसे खाता चलता है। जहाँ-जहाँ वह पत्ती को खा लेता है, वहाँ सफेद धारी-सी बन जाती है। इस धारी को ध्यान से देखने पर कहीं (कभी-कभी धारी के अन्त में) एक हल्का पीला, खाकी-सा धब्बा भी दिखाई देता है। इस धब्बे में ही कीड़ा बैठा होता है। किसी सुई वगैरह से कुरेदकर इस कीड़े को बाहर निकाल सकते हैं। इसकी लम्बाई 1 से 1.5 मिलीमीटर के करीब होती है।

इस कीड़े की ठीक-ठीक पहचान तो अभी नहीं हो पाई है। पर दो कीड़ों पर शक किया जा रहा है। एक है एग्रोमाइज़ा नामक कीट का लार्वा,

जिन खोजा तिन पाइयाँ

इस लेख में जिन शिक्षिका का ज़िक्र आया है, वे हैं श्रीमती मालती महोदय। वे होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत आने वाली शासकीय कन्या माध्यमिक शाला, धार, क्रमांक-3 में विज्ञान की अध्यापिका थीं।

यह उल्लेखनीय है कि होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण पद्धति में न केवल आसपास घटने वाली रोज़मर्रा की घटनाओं को पढ़ाई से जोड़ा जाता था, बल्कि ऐसी घटनाओं के अध्ययन के लिए प्रोत्साहित भी किया जाता था।

मालती महोदय ने विवरण भेजते हुए लिखा था कि, "अब मैंने तो यह सहज ही बता दिया था (छात्राओं को), मुझे तो कल्पना ही नहीं थी कि यह इतनी महत्वपूर्ण बात हो जाएगी।" यह सहज होने का आत्मविश्वास शायद होशंगाबाद विज्ञान पद्धति की ही देन थी।

पत्ती से कीड़ा निकालने वाली छात्रा तनूजा इसी शाला में कक्षा आठवीं में पढ़ती थी।

बैतूल ज़िले की शासकीय माध्यमिक कन्या शाला की शिक्षिका उमा राजपूत ने भी ऐसी ही एक पत्ती से कीड़ा निकाला और अपने सभी साथियों को भी बताया था। पत्ती किसी छात्रा ने लाकर दी थी। उनके स्कूल में जो सुक्ष्मदर्शी (डायनम सूक्ष्मदर्शी) था; उसमें उन्होंने कीड़े को ध्यान से देखा। संयोग से यह शाला बैतूल ज़िले की उन छह शालाओं में से एक थी, जिसमें होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम चल रहा था।

इसे पत्ती छेदक या लीफ माइनर भी कहा जाता है। यह पत्ती की ऊपरी और निचली सतह के बीच, पत्ती के हरे भाग यानी क्लोरोफिल को खाता हुआ आगे बढ़ता है। इसके आगे बढ़ने से सर्पाकार गलियारा-सा बनता जाता है। लार्वा धीरे-धीरे विकसित होकर प्यूपा में बदलता है और फिर प्यूपा, कीट बनकर उड़ जाता है।

केन्द्रीय एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन केन्द्र, नागपुर के वनस्पति रक्षा अधिकारी का कहना है कि यह लीफ माइनर ही है। यह पत्तीदार सब्ज़ियों, दालों और यहाँ तक कि खरपतवारों के पत्तों की सतह पर भी मिलता है। रक्षा अधिकारी का यह भी कहना है कि डरने की कोई बात नहीं है। ऐसी सब्ज़ियाँ खाने से, जिनकी पत्तियों पर ऐसी आकृतियाँ उभर आई हैं, किसी भी प्रकार का नुकसान होने की कोई सम्भावना नहीं है। सिर्फ सफाई की दृष्टि से कीड़े लगी पत्तियों को अलग कर देना चाहिए।

दूसरा कीड़ा एस्केरिस, नारू जैसे चर्चित कीड़ों का भाई-बन्धु है। इस कीड़े पर शक का कारण इसकी शारीरिक रचना है। जन्तु विज्ञान के वर्गीकरण के अनुसार यह कीड़ा

जिस समुदाय का सदस्य है, उसकी विशेषता यह है कि इस समुदाय के सभी कीड़ों के शरीर पर कहीं भी टाँगें या रोम इत्यादि नहीं होते हैं। इनकी सारी मांसपेशियाँ लम्बाई में जमी होती हैं यानी आड़ी दिशा में कोई मांसपेशी नहीं होती। अतः इन्हें चलने के लिए इन्हीं लम्बवत मांसपेशियों का उपयोग करना होता है। इसीलिए इनकी चाल भी सर्पाकार होती है।

इस समुदाय की एक खास प्रजाति के कीट ही पत्ती पर हमला करते हैं। ये कीट अपनी लार ग्रन्थियों से कई तरह के एंज़ाइम बनाते हैं, जिनके प्रभाव से कीट पत्ती की कोशिकाओं को पचाना शुरू कर देते हैं, और अन्दर-ही-अन्दर आगे बढ़ते रहते हैं।

तो यह तो तय है कि पत्तियों पर बनी आकृतियाँ नाग-नागिन की आकृति नहीं बल्कि इन कीड़ों का कमाल है। अब साँप जैसी आकृति बनना एक संयोग भर है। जैसा कि तुमने पढ़ा, दोनों ही कीट (या कीट का लार्वा) सर्पाकार गलियारा बनाते चलते हैं। अनुमान यह है कि जब लार्वा या कीट पत्ती खाना शुरू करते हैं, तो धीरे-धीरे मोटे होते जाते हैं। इसीलिए क्रमशः गलियारा मोटा होता जाता है, और आखिर में चौड़ा हो जाता है, जो फन जैसा या साँप के मुँह जैसा लगता है।

वैसे तो पत्तियाँ खाने वाले ये कीट हर साल अपना प्रकोप फैलाते हैं। पर इनके प्रसार में मामूली गर्मी और ज़्यादा नमी अधिक मदद करती है। संयोग से, उस साल अनुकूल वातावरण बन जाने से इनका असर कुछ ज़्यादा ही दिखाई पड़ा।

वास्तव में, यह एक सीधी-सादी प्राकृतिक घटना है। इसकी अजीबो-गरीब व्याख्या और प्रचलित अन्धविश्वास ने मिलकर लोगों में भय का वातावरण बना दिया था। सच तो यह है कि ऐसे कीट, फफूँद, वायरस, बैक्टीरिया आदि पेड़-पौधों पर लगते ही रहते हैं, और हम उनसे अनजान बने रहते हैं।

यह लेख चकमक पत्रिका के अंक अक्टूबर, 1991 से साभार।

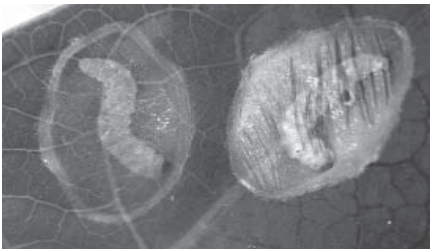

जंगल उगाना

आनन्द नारायणन और राधा गोपालन

मियावाकी वन – रोपण के 9 महीने बाद

हम जानते हैं कि जंगल तापमान नियमन, बाढ़ नियंत्रण, मिट्टी की उर्वरता के निर्माण, परागण को सहारा देने और कार्बन स्थिरीकरण में मदद करते हैं। लेकिन जंगल बनते कैसे हैं? क्या हम इन्हें भीड़-भाड़ वाले शहरी स्थानों या अनुपयोगी भूमि में उगा सकते हैं? क्या हम 25-30 वर्षों में देशी प्रजातियों का घना जंगल तैयार कर सकते हैं?

जंगलों की प्रचलित छवि के विपरीत, मियावाकी पद्धति के ज़रिए हम छोटे-छोटे स्थानों में वन को तेज़ी-से बहाल कर सकते हैं। एक जापानी वनस्पतिशास्त्री अकीरा मियावाकी द्वारा विकसित की गई यह विधि थोड़े ही समय में देशी प्रजातियों के घने बहुस्तरीय जंगल उगाने के लिए एक व्यवस्थित तरीका सुझाती है (देखें बॉक्स-1)। इस विधि द्वारा उगाए गए प्रत्येक वन को स्थानीय वनों का एक छोटा रूप मान सकते हैं। इस तरीके का उपयोग दुनिया भर के कई देशों में विभिन्न स्थलों पर किया गया है जैसे – छोटे-छोटे शहरी स्थान और अनुपयोगी भूमि से लेकर अर्ध-शुष्क भूमि के बड़े हिस्सों तक।

मियावाकी वन का रोपण

चरण-1: चयनित स्थान पर मिट्टी की बनावट, पीएच, जैविक कार्बन

बॉक्स-1: अकीरा मियावाकी कौन हैं?

अकीरा मियावाकी

अकीरा मियावाकी का जन्म 29 जनवरी, 1928 को जापान के ओकायामा प्रान्त में हुआ था। वे अपने माता-पिता वाकिची मियावाकी और त्सुने मियावाकी के साथ ओकायामा प्रान्त के एक कृषक समुदाय में पले-बढ़े। उन्होंने एक शोधकर्ता के रूप में पारिस्थितिकी और जीवविज्ञान के क्षेत्र में जापान और जर्मनी के विश्वविद्यालयों में अध्ययन और काम किया। 1970 के दशक में जापान के मन्दिरों और कब्रिस्तानों के आसपास संरक्षित प्राकृतिक वनों के अवशेषों से प्रेरित होकर, मियावाकी के मन में नए तरीके से ऐसे जंगल उगाने का विचार आया। इस विचार को सबसे पहले निप्पॉन स्टील कॉरपोरेशन के लिए लागू किया गया और आज दुनिया भर में 4000 से अधिक मियावाकी वन फैले हुए हैं।

मियावाकी के अपने शब्दों में (2006), "इस काम का उद्देश्य, पहले से मौजूद जंगलों को बहाल करने की बजाय, सघन मैदानी सर्वेक्षण और वनस्पति की पारिस्थितिकी के आधार पर असल देशी वन का निर्माण करना है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि भविष्य में हम वे गलतियाँ न दोहराएँ जो अतीत में की थीं। देशी वन उन सब लोगों के जीवन की रक्षा करते हैं जो वहाँ जन्मे और पले-बढ़े, स्कूलों में जा रहे हैं और काम कर रहे हैं। वे संस्कृति के निर्माण हेतु लोगों की संवेदनाओं को पैना करते हैं और नए विकास के लिए उन्हें बौद्धिक रूप से तैयार करते हैं... जिस विश्वास और क्रियाकलापों से मैं जंगल उगाने के लिए खुद को समर्पित करता हूँ, वह रातों-रात नहीं आया; मैं उम्मीद करता हूँ कि आप यह देखेंगे और समझ पाएँगे कि 78 साल से यही मेरा जीवन जीने का सलीका रहा है।" 16 जुलाई, 2021 को निधन तक अकीरा मियावाकी कई वनीकरण गतिविधियों में सक्रिय रूप से शामिल रहे।

और नाइट्रोजन पदार्थ एवं सूक्ष्म और स्थूल प्राणियों की उपस्थिति का विश्लेषण करें। अन्तिम कारक (मापदण्ड) का आकलन तो देखकर किया जा सकता है, लेकिन मिट्टी के नमूनों को प्रयोगशाला परीक्षण के लिए भेजने की ज़रूरत होती है। यह कदम हमें यह पहचानने में मदद करता है कि मिट्टी को अतिरिक्त पोषण की आवश्यकता है या नहीं।

चरण-2: चरण-1 में किए गए विश्लेषण के परिणामों के आधार पर

मिट्टी तैयार करें (चित्र-1)। उदाहरण के लिए, यदि ऊपर की सख्त मिट्टी पानी के रिसाव को रोक रही है, तो सरन्ध्रता में सुधार लाने के लिए उसमें मूँगफली के छिलके या गेहूँ, मक्का या चावल की भूस अच्छे से मिलाना (mulching) उपयोगी होगा। चूँकि मिट्टी की नमी पौधे के विकास के शुरुआती वर्षों में महत्वपूर्ण होती है इसलिए उसकी नमी को बनाए रखने के लिए सूखी मिट्टी को पुआल, कोको पीट (नारियल की भूसी) आदि के पलवार की आवश्यकता हो सकती है। इसी तरह, निम्नीकृत (degraded) मिट्टी को एक मीटर की गहराई तक जैविक मिट्टी कंडीशनर, जैसे मवेशी और बकरी की खाद या वर्मीकम्पोस्ट (सब्ज़ी, खाद्य अपशिष्ट और अन्य विघटित कार्बनिक पदार्थों का मिश्रण) की मदद से समृद्ध बनाने की ज़रूरत हो सकती है।

चरण-3: स्थानीय जंगलों में जाकर, किताबें देखकर या लोगों से स्थानीय प्राकृतिक इतिहास के बारे में बातचीत करके उगाए जाने वाले पौधों की एक सूची तैयार करें। देशी प्रजातियों को चुनें क्योंकि वे स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल होती हैं। विविध पौधों की प्रजातियों का चयन करने की सिफारिश की जाती है (जैसे कुछ फूल वाले पौधे और लताएँ, कुछ झाड़ियाँ, छतरी वाले कुछ ऊँचे पेड़ और कुछ पेड़ जो एक झाड़ी और उपवृक्ष स्तर तक बढ़ते हैं)।

चरण-4: किसी विश्वसनीय नर्सरी, जैसे कई राज्यों में वन विभाग द्वारा संचालित नर्सरी से स्वस्थ पौधे

चित्र-1: *मिट्टी तैयार करने के बाद ग्रिड का उपयोग यह निर्धारित करने के लिए किया जाता है कि प्रत्येक पौधा कहाँ लगाया जाएगा। ग्रिड के प्रत्येक चौखाने में एक पौधा होता है। गड्ढे की गहराई, पौधे के आकार और अन्ततः विकसित होने वाले पेड़ के अनुसार होती है।*

(क)

(ख)

चित्र-2: पौध खरीद और रोपण। (क) विभिन्न तरह की पौध बैग और गमलों में उगाई जाती हैं। (ख) यह ध्यान रखा जाता है कि जो पौध बड़े पेड़ों में विकसित होने वाले हैं, उन्हें एक-दूसरे के बगल में नहीं लगाया जाता। तिरुवनन्तपुरम, केरल से फोटो।

खरीदें। आम तौर पर, किसी नर्सरी में वन प्रजातियों के पौधों को अच्छी तरह से जड़ पकड़ने में तीन महीने लगते हैं।

चरण-5: प्रत्येक पौधे को एक गड्ढे में रोपें और फिर मिट्टी से ढँक दें (चित्र-2)। गड्ढे के आकार को रोपण की जाने वाली प्रजातियों के, खास तौर से उनकी जड़ किस तरह की है, उसके आधार पर निर्धारित किया जाता है। यदि आवश्यक हो तो मिट्टी (विशेष रूप से खराब मिट्टी) को अतिरिक्त मिट्टी कंडीशनर की मदद से समृद्ध बनाया जा सकता है। नमी के नुकसान को रोकने के लिए, प्रत्येक पौधे के गड्ढे को सूखे पत्तों,

चित्र-3: सूरज की गर्मी से होने वाले नमी के नुकसान को रोकने के लिए पौध के चारों ओर कॉयर पिथ (नारियल की जटा का भूसा) फैलाया जाता है। मुन्नार, केरल में शान्तापारा से फोटो।

पेड़ की छाल की खपच्चियों, लकड़ी की छीलन, चावल के भूसे, मकई के ठूँठ या खाद से बनी छः इंच मोटी परत से ढँक दें या उसे मिट्टी की ऊपरी पर्त में अच्छी तरह से मिला दें (चित्र-3)। बाँस की डण्डी या अन्य स्थानीय रूप से उपलब्ध चीज़ों से पौधे को सहारा दें। इस पद्धति का उपयोग 10 वर्ग मीटर क्षेत्र में लगभग 30 पौधे लगाने के लिए किया जा सकता है यानी लगभग 2.5-2.5 फुट की दूरी पर पौधों को लगाया जा सकता है। बशर्ते एक ही प्रजाति की पौध पास-पास न हों ताकि उनके बीच संसाधनों (प्रकाश, पानी, पोषक तत्वों तक पहुँच) के लिए प्रतिस्पर्धा न हो।

चरण-6: विकास के पहले दो वर्षों तक पौधों को दिन में कम-से-कम एक बार पानी देकर उनकी देखभाल करें (चित्र-4 देखें)। गर्मियों में अधिक तापमान के कारण पानी के नुकसान की भरपाई के लिए पौधों को ज़्यादा पानी देने की आवश्यकता हो सकती है। नियमित रूप से पानी सुनिश्चित करने के लिए, एक विश्वसनीय जल स्रोत तक पहुँच ज़रूरी है। जंगल के आकार और उपलब्ध जल संसाधनों के आधार पर, एक जल वितरण प्रणाली या सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली (ड्रिप या स्प्रिंकलर) स्थापित की जा सकती है। पहले दो वर्षों तक, खरपतवारों के प्रबन्धन की आवश्यकता होती है, जिसके बाद जंगल स्वयं खरपतवारों को सम्भाल लेगा। लम्बे समय तक देखभाल के बारे में, अकीरा मियावाकी कहते हैं, "कोई रखरखाव न करना सबसे अच्छा रखरखाव है। यदि किसी जंगल को पहले 2-3 वर्षों के बाद भी रखरखाव की आवश्यकता होती है, तो वह एक फर्जी जंगल है।"

(क) (ख) (ग)

चित्र-4: *विकास की विभिन्न अवस्थाएँ। (क) 6 महीने बाद। (ख) 12 महीने बाद। (ग) 2 साल बाद।*

हालाँकि, इस पद्धति ने कई लोगों और संगठनों का ध्यान आकर्षित किया है, इसके क्रियान्वयन के शुरुआती चरणों की भारी लागत एक चुनौती पेश कर सकती है। इसमें पौध खरीदना, मिट्टी में मिलाने के लिए कई सारे पदार्थ और दो साल के लिए पानी के स्रोत तक पहुँच की लागत शामिल है। चूँकि इस विधि में सघन रोपण शामिल है, ऐसे जंगल को उगाने के लिए आवश्यक पौधों की संख्या लागत को और भी बढ़ा सकती है। यह देखते हुए कि शहरी भूमि अक्सर खराब स्थिति में होती है, मिट्टी और ज़मीन तैयार करने की लागत भी काफी अधिक हो सकती है।

मियावाकी के जंगल: सीखने-सिखाने का अवसर

इस पद्धति ने तिरुवनन्तपुरम के कुछ स्कूलों के छात्रों को अपने परिसरों में छोटे मियावाकी वन स्थापित करने के लिए प्रेरित किया है। वनस्पति आवरण बनाने या बहाल करने और कार्बन के स्थिरीकरण के प्रयास के अलावा, ऐसे वन छात्र अन्वेषणों की एक शृंखला को भी सहारा दे सकते हैं। उदाहरण के लिए, इन वनों को उगाने के चरण-1 में आवश्यक मिट्टी की जाँच मिडिल या हाई स्कूल जीवविज्ञान और रसायनविज्ञान की एक दिलचस्प गतिविधि बन सकती है। छात्रों को पौधों की वृद्धि, जीवों की विविधता और वन को जीवित रखने वाली अन्य चीज़ों के साथ-साथ वन विकास के विभिन्न चरणों में सूक्ष्म-जलवायु से जुड़े बदलाव को देखने और उनका दस्तावेज़ीकरण करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है।

सार

- मियावाकी पद्धति का उपयोग करके छोटे-छोटे शहरी स्थानों और अनुपयोगी या खराब हो चुकी भूमि में देशी प्रजातियों के घने बहुस्तरीय जंगलों को कम समय में उगाया जा सकता है।
- इस पद्धति को एक जापानी वनस्पतिशास्त्री अकीरा मियावाकी द्वारा विकसित किया गया था, जो जापान में मन्दिरों और कब्रिस्तानों के आसपास संरक्षित प्राकृतिक वनों के बचे-खुचे टुकड़ों से प्रेरित थे।
- स्कूल परिसरों में उगाए जाने पर, ऐसे वन न केवल वनस्पति आवरण बनाने या बहाल करने में मदद करते हैं, बल्कि वन पारिस्थितिकी तंत्र की वनस्पतियों, जीवों और अजैविक घटकों के बीच अन्तरक्रिया को लेकर छात्रों द्वारा खोजबीन की एक शृंखला का भी अवसर प्रदान करते हैं।

अतिरिक्त संसाधन:

1. मियावाकी द्वारा उगाए गए 15 महीने पुराने जंगल की झलक के लिए, यहाँ जाएँ: https://youtu.be/l4tvAizYfGw.
2. मियावाकी पद्धति के बारे में अधिक जानकारी के लिए, इस पद्धति के माध्यम से बनाए गए वनों की कई सफलता की कहानियों के लिए, देखें: https://www.crowdforesting.org/
3. इस विधि को चुनने से पहले अधिक विशिष्ट बातों पर विचार करने के लिए: https://www.thehindu.com/sci-tech/energy-and-environment/they-grow-fast-and-easy-but-do-miyawaki-forests-meet-the-fundamental-principles-of-ecological-restoration/article65258901.ece

---

आनन्द नारायणन: भारतीय अन्तरिक्ष विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संस्थान (IIST), तिरुवनन्तपुरम में खगोल भौतिकी पढ़ाते हैं। उनका शोध यह समझने पर है कि बड़े पैमाने पर आकाशगंगाओं के बाहर बैरियोनिक पदार्थ कैसे वितरित हैं। वे नियमित रूप से खगोल विज्ञान से सम्बन्धित शैक्षिक और सार्वजनिक आउटरीच गतिविधियों में योगदान देते हैं। दक्षिण भारत के सांस्कृतिक इतिहास की खोज करते हुए यात्रा करना पसन्द करते हैं।

राधा गोपालन: एक पर्यावरण वैज्ञानिक हैं, जिन्होंने भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), बॉम्बे से पीएच.डी. प्राप्त की है। पर्यावरण परामर्श में 18 वर्ष के करियर के बाद उन्होंने ऋषि वैली एजुकेशन सेंटर में पर्यावरण विज्ञान पढ़ाया। वे स्कूल ऑफ डेवलपमेंट, अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी में विज़िटिंग फैकल्टी हैं। *आई-वंडर* पत्रिका के सम्पादकों में से एक और कुडाली इंटरजनरेशनल लर्निंग सेंटर, तेलंगाना की सदस्य हैं।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: संदीप दुबे: एक शोधकर्ता हैं, और उन्होंने प्रारम्भिक शिक्षा प्रणाली पर काम किया है। उन्हें सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं से जुड़े लेखों का अनुवाद और सम्पादन करना पसन्द है।

यह लेख *आई-वंडर* पत्रिका के अंक दिसम्बर 2021 से साभार।

फोटो साभार: Invis Multimedia & https://www.crowdforesting.org/

तारा की क्लास
एक बेहतर अवलोकन प्रथा की ओर

गोपाल मिड्ढा

तारा मुम्बई के एक स्कूल में गणित पढ़ाती है। वह चाहती है कि छात्रों को गणित में मज़ा आए। वह यह भी चाहती है कि वे सब टीमवर्क सीखें। एक दिन तारा विद्यार्थियों को पाँच-पाँच के समूह में बाँट देती है। फिर प्रत्येक समूह को एक-एक चार्ट पेपर देती है। प्रत्येक समूह को तीन आयत बनाने हैं और फिर प्रत्येक आयत के कुछ हिस्सों को रंग से भरना है। इसके बाद एक समूह के छात्र को दूसरे समूह के आयतों को देखकर बताना होगा कि प्रत्येक आयत का कितना अंश रंग से भरा गया है। इस गतिविधि का उद्देश्य है, बच्चों को भिन्न सिखाना।

निरीक्षण और अवलोकन

प्रिंसिपल शर्मिला, तारा की क्लास का निरीक्षण करने आती हैं। वे देखती हैं कि प्रत्येक समूह में तीन विद्यार्थी आयत बना रहे हैं और शेष दो विद्यार्थी बिना किसी योजना के उसके एक भाग को टेढ़ा-मेढ़ा रंग रहे हैं। इससे भिन्नों को सही मापना बहुत कठिन हो जाता है। वे एक छात्र-समूह को यह बात समझाती हैं, लेकिन छात्र उन्हें देखते हैं, मुस्कराते हैं और रंग भरना जारी रखते हैं। समूहों में गणित से असम्बन्धित बहुत-सी बातें भी हो रही हैं, जिससे कक्षा में बहुत शोर हो रहा है।

दस मिनट के अध्यापन निरीक्षण के बाद शर्मिला निरीक्षण पुस्तिका में अनुशासन, प्रेरणा और निर्देशों की स्पष्टता जैसी चीज़ों का मूल्यांकन करती हैं। फिर वे तारा से कहती हैं, "मुझे लगता है कि छात्र भिन्नों को मापने में सटीक नहीं हैं और आपकी कक्षा में बहुत शोरगुल है।"

तारा जवाब देती है, "मैं मानती हूँ लेकिन छात्र अभी भिन्न सीख रहे हैं और प्रत्येक समूह की निगरानी करना बहुत मुश्किल है।"

शर्मिला निराश महसूस करती हैं क्योंकि उन्हें लगता है कि तारा उनकी बात नहीं सुन रही है। तारा भी निराश है क्योंकि उसे लगता है कि अवलोकन में बातों को सही से परखा नहीं गया है। प्रोत्साहन तो दूर, समूह-कार्य के माध्यम से गणित पढ़ाने के उसके नवीन प्रयास पर ध्यान ही नहीं दिया गया। तारा निर्णय लेती है कि

अब से वह कक्षा में सिर्फ ब्लैकबोर्ड और लेक्चर से गणित पढ़ाएगी, इस तरह क्लास में शोर भी कम होगा।

शिक्षक-निरीक्षक का तालमेल

तारा की कहानी अनोखी नहीं है। यदि आप कई वर्षों से पढ़ा रहे हैं, तो सम्भव है कि आपकी कक्षा में भी कोई निरीक्षक आया हो। आम तौर पर कक्षा में पीछे बैठकर, वह ब्लैकबोर्ड पर आपके द्वारा लिखी गई चीज़ों को करीब से देखेगा, आपकी बातों को ध्यान से सुनेगा और यह जाँचने की कोशिश करेगा कि विद्यार्थी आपकी बात समझ भी पा रहे हैं या नहीं। हर बार जब आपकी नज़र उस पर जाएगी, तो आप अधिक सतर्क महसूस करेंगे और क्षण भर के लिए शायद विचलित भी हो जाएँ। यदि यह पर्यवेक्षक/निरीक्षक एक प्रधानाध्यापक या वरिष्ठ अधिकारी है, तो यह सतर्कता आपके लिए एक आदर्श शिक्षण मशीन बनने का संघर्ष भी बन सकती है।

यदि आप एक निरीक्षक या पर्यवेक्षक रहे हैं, तो आपको यह समझने में कठिनाई आ सकती है कि किन चीज़ों पर ज़्यादा ध्यान दें। आप पाठ के बीचोबीच किसी छात्र की मदद करने या शिक्षक को गलत होने पर उसे सही करने की ज़रूरत भी महसूस कर सकते हैं। और फिर पाठ के बाद आलोचनात्मक प्रतिक्रिया देने में हमेशा थोड़ी झिझक भी होती है

कि कहीं अध्यापक का मनोबल न गिर जाए। कुल मिलाकर, निरीक्षण किस चीज़ का करना है और किन बातों पर प्रतिक्रिया देनी है, यह तय करना उतना ही मुश्किल है जितना एक नदी के बीच में खड़े होकर यह तय करना कि वह कैसे बहती है और उसे सही दिशा में कैसे निर्देशित किया जाए।

अवलोकन का महत्व

फिर भी कक्षा-अवलोकन एक ज़रूरी क्रिया मानी जाती है। जब मैं शिक्षा से जुड़े लोगों से पूछता हूँ कि हमें यह देखने की आवश्यकता क्यों है कि शिक्षक कैसे पढ़ाते हैं, तो मुझे पाठ-अवलोकन के कुछ लाभ बताए जाते हैं, जैसे वे संरचित तौर से आकलन करने में मदद करते हैं कि क्या और कैसे पढ़ाया जा रहा है, शिक्षण में सुधार के सुझाव देते हैं, अच्छे शैक्षिक तरीकों/मानकों को प्रोत्साहन देते हैं और शिक्षक जवाबदेही को बल प्रदान करते हैं।

हालाँकि, ये लाभ उपयोगी हैं लेकिन शोध से पता चलता है कि ये लाभ अक्सर हासिल नहीं होते। इसकी बजाय कक्षा-अवलोकन शिक्षकों पर अनुचित दबाव डालने का काम करते हैं। ज़्यादातर मामलों में, अवलोकन शिक्षक-प्रेरणा को कम भी कर देता है। एक अनुभवी शिक्षक के शब्दों में – "अवलोकन शिक्षण का सच नहीं मापता क्योंकि छात्र प्रिंसिपल के सवालों से अक्सर डर जाते हैं और सब जानते हुए भी उन्हें सही जवाब नहीं दे पाते।"

अवलोकन के लाभ बटोरने से पहले हमें उसकी धारणाओं की जाँच करना आवश्यक है। एक शिक्षक या प्रधानाध्यापक के नाते, आपके लिए यह पता लगाना उपयोगी हो सकता है कि क्या अच्छे शिक्षण को साकार करने के अच्छे इरादे कहीं छात्रों के ज्ञान और सीखने को नुकसान तो नहीं पहुँचा रहे। क्या अवलोकन इसलिए है कि शिक्षक जवाबदेही पर खरे उतरें? या फिर अवलोकन को शोध का ऐसा उपकरण माना जाए जिससे हम शिक्षण की चुनौतियों को बारीकी-से समझ पाएँ और नई शिक्षण तकनीक को जाँच पाएँ?

अवलोकन की धारणा अवलोकन को रचती है। एक प्रभावी अवलोकन के लिए निम्नलिखित पाँच पहलू निर्धारित करना आवश्यक हैं:

- इस बात की स्पष्टता हो कि अवलोकन क्या माप रहा है।
- अवलोकन किस समय किया जाएगा।
- क्या अवलोकन के निष्कर्ष विश्वसनीय हैं।
- कैसे निश्चित किया जाए कि अवलोकन के निष्कर्ष सही हैं या नहीं।
- अवलोकन की प्रतिक्रिया कैसे दी जाए।

इन पाँच पहलुओं को ध्यान में रखते

हुए, चलिए तारा की कक्षा का अवलोकन करते हैं।

स्पष्टता: हमें शोध से यह पता चलता है कि एक गणित के पाठ का अवलोकन निम्नलिखित चीज़ों को मापता है:

- शिक्षार्थी का ज्ञान आधार – यानी छात्र गणित के बारे में पहले से क्या जानते हैं।
- समस्या-समाधान रणनीतियों का उपयोग – यानी वे गणित समस्या को हल करने के लिए किन-किन नीतियों का प्रयोग करते हैं।
- मेटा-अनुभूति, विशेष रूप से स्व-निगरानी और स्व-नियमन – यानी क्या वे अपनी नीतियों और अपनाए गए तरीकों के प्रयोग के बारे में जागरूक हैं?
- विश्वास प्रणालियाँ – यानी गणित के छात्र होने के बारे में उनकी क्या मान्यताएँ हैं?

चूँकि ये मापदण्ड हर विषय के लिए अलग-अलग हो सकते हैं, एक ही अवलोकन फॉर्मेट से गणित या इतिहास के शिक्षण को मापना इस तरह होगा मानो हम दिल और गुर्दे को एक तरह जाँचें। इस वजह से हम विषयों की सूक्ष्मता और छात्र उन विषयों को कैसे समझते हैं, यह नहीं जान पाएँगे। और अवलोकन केवल ऊपरी बातें जैसे कि कक्षा में कितनी शान्ति है या क्या कॉपियों में लिखावट सुन्दर है, तक सीमित रह जाएगा।

समय: अवलोकन के लिए समय शिक्षक के साथ मिलकर निर्धारित किया जाना चाहिए और हो सके तो अवलोकनकर्ता को पूरी कक्षा-अवधि तक रहना चाहिए। शर्मिला द्वारा किए गए दस मिनट के अवलोकन की अवधि में पूरी पठन-पाठन क्रिया को समझना मुश्किल है। किस तरह एक गतिविधि दूसरी गतिविधि में तब्दील होती है और वह शिक्षण को कैसे आगे बढ़ाती है, यह जानने के लिए दस मिनिट अपर्याप्त हैं। अगर हम एक फिल्म पर राय बनाने के लिए उसे कम-से-कम मध्यान्तर तक देखते हैं तो एक सजीव कक्षा के लिए 40 मिनट देना अनुचित नहीं है।

अवलोकन केवल अप्रत्याशित नहीं होना चाहिए। इससे अवलोकन सिर्फ एक हौवा बनकर रह जाता है। इससे भी फर्क पड़ता है कि निर्धारित अवलोकन कब हो रहा है। अक्सर मध्यान्ह भोजन के तुरन्त बाद या स्कूल छूटने से कुछ पहले छात्र ज़्यादा चंचल या फिर व्याकुल रहते हैं।

अवलोकनकर्ता: यदि शिक्षण का अवलोकन शर्मिला जैसी वरिष्ठ अधिकारी की जगह कोई छोटी टीम करे तो बेहतर रहेगा। जब एक वरिष्ठ अधिकारी कक्षा का अवलोकन करता है तो शिक्षण और छात्रों का व्यवहार मात्र एक नाटकीय प्रदर्शन-सा बन जाता है, जिसमें छात्रों को कठपुतलियों की भाँति कविताएँ और

रटे हुए वाक्य (my name is Mala, I am in 5th standard) दोहराने पर ज़ोर दिया जाता है। इससे आप उनकी स्मरण शक्ति और नाट्य कला मापते हैं, विषय और सूझ-बूझ में सक्षमता नहीं। तारा की अध्यापन प्रणाली कम-से-कम छात्रों को भिन्न बनाने और जाँचने में अपनी सोच का इस्तेमाल करने का मौका देती है।

यदि 2-3 लोग साथ में अवलोकन करते हैं तो वे पहले से मुद्दों को आपस में अलग-अलग बाँट सकते हैं और गहराई से उन पर ध्यान दे सकते हैं। अगर शिक्षक एक-दूसरे का अवलोकन करें तो और भी बेहतर होगा। इससे सतर्कता कम होगी और शिक्षण कम नाटकीय होगा। ऐसे तरीके अपनाएँ जिसमें कुछ शिक्षक मिलकर शिक्षण पद्धति में बदलाव निर्धारित करते हैं और फिर उस बदलाव को शिक्षण में लाते हुए एक-दूसरे के शिक्षण का अवलोकन करते हैं। इससे अवलोकन शोध और चिन्तनशील विचार-विमर्श का एक स्रोत बन जाता है। अगर बाकी लोगों के लिए समय निकालना दूभर है तो तारा स्वयं एक कैमरा लगाकर अपनी शिक्षा का अवलोकन कर सकती है। आजकल के मोबाइल कैमरे इसके लिए काफी उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। हर हफ्ते स्टाफ मीटिंग के दौरान यदि शिक्षक अपने समूह-कार्य शिक्षण का पाँच मिनट का क्लिप भी दिखाएँ तो इससे शिक्षण पद्धति और समूह-

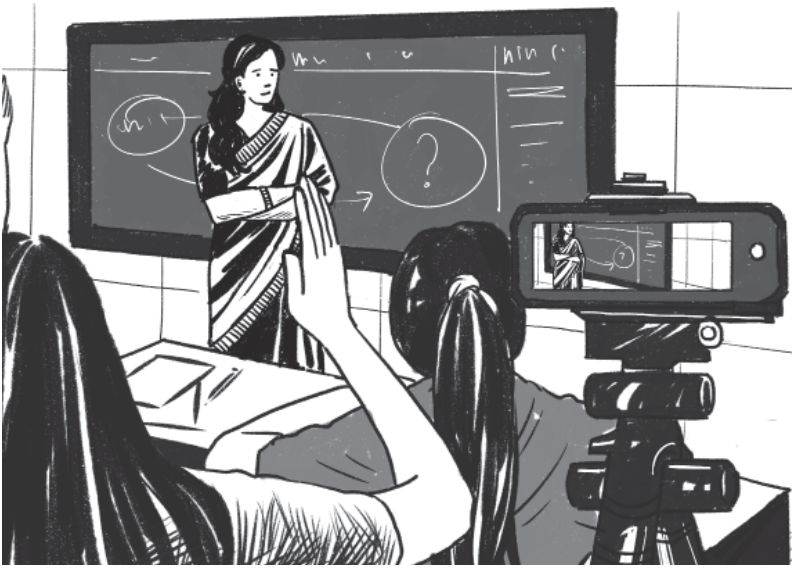

कार्य को बेहतर कैसे बनाया जाए, इस बारे में गहराई से विचार-विमर्श हो सकता है।

विश्वसनीयता: अवलोकन के निष्कर्षों को विश्वसनीय बनाने के लिए, अध्यापन के अनुभव के अलावा दूसरी बातों पर भी ध्यान दें। शर्मिला, तारा की पाठन योजना देखें कि उसमें शिक्षण की क्या विचारधारा थी। छात्रों की कॉपियों को देखें कि उनमें क्या-क्या लिखा गया है। क्या तारा ने हर छात्र को नियमित तौर से लिखित प्रतिक्रिया दी है? छात्रों से थोड़ी बातचीत करें कि तारा के अध्यापन की कौन-सी बातें उन्हें पसन्द हैं, कौन-सी गतिविधि उन्हें सोचने और समस्या का समाधान करने के लिए उकसाती हैं। क्या गणित के बारे में उनकी पुरानी धारणाएँ बदली हैं? तारा से कक्षा के बाहर बातचीत करके पता लगाएँ कि उन्हें अपने विषय के बारे में किस चीज़ में प्रभुत्व है। तारा अपने शिक्षण का किस तरह स्वयं अवलोकन करती है, क्या वह डायरी में अपना अनुभव लिखती है? जब कभी वह गणित पढ़ाते वक्त अटक जाती है या उसे कोई समस्या आती है तो वह उसे कैसे सुलझाती है?

प्रतिक्रिया: अवलोकन के बारे में प्रतिक्रिया देते समय, शिक्षण की ओर ध्यान दें, न कि शिक्षक की ओर। उदाहरण के तौर पर, शर्मिला को कहना चाहिए कि "समूह में छात्रों की भूमिका को स्पष्ट न करने की वजह

से उनमें एक-दूसरे से गणित सीखने का मौका कम हो गया है", न कि यह कहें, "तुम्हें छात्रों की भूमिका स्पष्ट करनी चाहिए थी"। अवलोकन में सकरात्मक पहलुओं पर भी बात करें। उदाहरण के तौर पर, शर्मिला कहें, "भिन्न को समूह-कार्य द्वारा समझाने की तकनीक नई थी।" प्रतिक्रिया स्पष्ट रहे तो उससे फायदा होता है।

अन्त में

कक्षा का अवलोकन उतना ही जटिल और सूक्ष्म है, जितना पढ़ाना। यदि अवलोकन को बेहतर बनाना है तो उसे शोध की तरह देखना होगा। उससे जिज्ञासा जागृत होगी और डर भी कम लगेगा। अच्छा शिक्षण वाकई में रॉकेट साइन्स से कम नहीं, इसलिए हमें उसका अवलोकन भी उतनी ही गहरी सोच से करना होगा – सिर्फ दस मिनट में कुछ सवाल पूछना और छात्रों से कविता सुनने की प्रथा को बदलना होगा। शिक्षकों और शिक्षण को बदलने के लिए हमें निरीक्षण और अवलोकन को भी बदलना होगा – यह कठिन ज़रूर है लेकिन तभी हम छात्रों को विषयों में दक्ष और उनके जीवन के प्रति संवेदनशील बना पाएँगे।

गोपाल मिड्ढा: पिछले 15 वर्षों से शिक्षा के विभिन्न पहलुओं से जुड़े हैं। उन्होंने भारत एवं अमेरिका में शिक्षण नेतृत्व, अध्यापन, शिक्षक तैयारी और स्कूलों को कैसे बेहतर बनाया जाए पर शोध किए हैं। आजकल वे शिक्षा के विभिन्न पहलुओं पर एक अनुसंधान केन्द्र 'शिक्षा - एक खोज' (www.shikshaekkhoj) स्थापित करने में जुटे हैं।

सभी चित्र: अक्षय सेठी: वे रोज़मर्रा के अनदेखे, मामूली व बार-बार दोहराते पहलुओं में खुद को अपनी ड्रॉइंग, कॉमिक्स और इंस्टॉलेशन के ज़रिए झोंका करते हैं। कॉलेज ऑफ आर्ट, नई दिल्ली से पेंटिंग में स्नातकोत्तर। दिल्ली में ही रहते और काम करते हैं।

अधिगम क्षति (लर्निंग लॉस) पर कुछ सवाल

मीनू पालीवाल

सीखने को लेकर हम कई तरह की बातें सुनते हैं जैसे सीखना तो ज़िन्दगी भर चलते रहने वाली प्रक्रिया है, हर कोई अपने सन्दर्भों में सीखता रहता है आदि। बच्चों के स्कूली सन्दर्भ में हम अक्सर सुनते हैं कि सिर्फ स्कूलों में सीखना नहीं होता। बच्चे हर जगह – घर में, खेल के दौरान, वयस्कों या अपने बराबर वालों से बातचीत के द्वारा, घूमने-फिरने के दौरान अवलोकन से व स्कूलों में सीखते हैं। हर बच्चे के सीखने की अपनी गति एवं क्षमता होती है। लेकिन इन दिनों अक्सर यह सुनने को मिल रहा है कि लॉकडाउन के बाद से बच्चे स्कूलों में सीखे हुए विषय तथा व्यवहार को भूल गए हैं। इसलिए यहाँ पर रुककर यह सोचना लाज़मी हो जाता है कि क्या बच्चे स्कूलों अथवा उस दायरे से बाहर सीखा हुआ सचमुच पूरी तरह से भूल जाते हैं?

सीखना-सिखाना और नुकसान

हर जगह यही सुनने को मिल रहा है कि बच्चे स्कूल में सीखा हुआ भूल गए हैं। पर जब इस पर बात होती है कि "क्या आप चिह्नित कर पाएँगे कि बच्चे क्या भूल गए हैं" तो वे अक्सर लिखित संख्या चिह्न, अक्षर, मात्रा, अँग्रेज़ी के अल्फाबेट्स की ही बात करते हैं। प्राथमिक कक्षाओं के वे बच्चे जो लॉकडाउन से पहले पढ़ लेते थे, क्या अब पढ़ना पूरी तरह ही भूल गए हैं? इस तरह की बात कम ही देखने को मिलती है। हाँ, पाठ्यपुस्तक पढ़ने की रफ्तार में अन्तर ज़रूर आया है। पर यह डिकोडिंग जैसी यांत्रिक प्रक्रिया में प्रैक्टिस की कमी की वजह से है। जैसे ही बच्चे स्कूल में थोड़ा समय बिताएँगे, वे कुछ ही समय में सही पढ़ने लगेंगे। यह बात कुछ शिक्षकों ने भी मुझसे साझा की। लॉकडाउन के बाद मध्य प्रदेश में 20 सितम्बर, 2021 से स्कूल खुल गए थे। एक शिक्षिका ने बताया कि 20-25 दिनों में ही वे बच्चे जो पहले ही पढ़ना सीख चुके थे, अपने सीखने के पुराने स्तर पर वापस पहुँच गए।

क्या ऐसा ही अन्य अवधारणाओं में भी होता है? वे कौन-से निर्णायक कारक होते हैं जो यह तय करते हैं कि क्या याद रहेगा और क्या भूल जाएँगे? हमें वो बातें और चीज़ें याद

रहती हैं जो –

- बार-बार दोहराई जाती हैं।
- हमारे लिए ज़्यादा मायने रखती हैं।
- हमें समझ आती हैं।
- जिसे हमें करके देखने का अवसर मिलता है।
- जिनसे हमारा लगाव अथवा अपनापन होता है।

क्या हम अपने जन्म का वर्ष, शादी की तारीख, करीबी लोगों के जन्मदिन आदि भूल जाते हैं? हम इतिहास में हुई बहुत-सी घटनाओं के वर्ष भूल जाते हैं परन्तु अपने देश की आज़ादी का वर्ष नहीं भूलते। जो बातें हमें समझ नहीं आतीं, वे हमें याद भी नहीं रहतीं और यदि हम न समझ आने वाली बातों को बार-बार दोहराकर रट लेते हैं तो बीच में यदि थोड़ा भी भूल गए तो आगे बढ़ पाना मुश्किल होता है। इसके उलट जब हमें कोई बात समझ आती है तो हम उस बात को अपने शब्दों में या बीच का कुछ भूल जाने पर भी थोड़ा सोचकर कोई नया रास्ता निकाल लेते हैं।

कक्षा में गणित पढ़ाने का तरीका

गणित से आम तौर पर डर की बात सुनने को मिलती है, इसका मुख्य कारण नीचे दिए उदाहरण से समझने की कोशिश करते हैं। प्रश्न है - 915/4 इस प्रश्न को हल करने के लिए हमें नीचे दिए गए चरण क्रमवार याद रखने होंगे।

- चार का पहाड़ा तब तक बोलिए जब तक कि आप नौ से कम संख्या तक रहें।
- इसके बाद आठ को नौ से घटाना है और दो को ऊपर लिखना है।
- फिर 915 में से एक को नीचे लाना है।
- फिर चार का पहाड़ा तब तक बोलना है जब तक संख्या 11 से कम रहे, फिर दो को पहले लिखे दो के दाएँ बाजू में लिखना है।
- फिर 11 में से आठ को घटाना है।

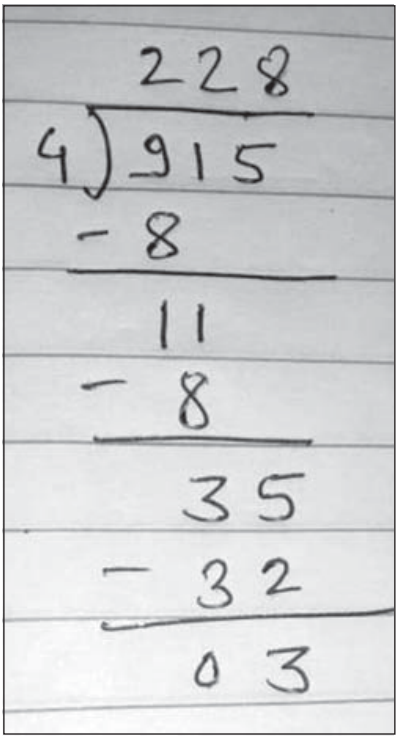

चित्र-1

- अब पाँच को नीचे लाना है, और इस बार चार का पहाड़ा तब तक बोलना है जब तक संख्या 35 से कम रहे।
- अब हमें 35 में से 28 को घटाना है और आठ को 22 के दाएँ बाजू में लिखना है।

इस तरह कितना कुछ बिना किसी तार्किक आधार के याद रखना होता है। मसलन, भाग बाईं तरफ से क्यों किया जाता है, भाग की प्रक्रिया में घटाया क्यों जाता है, बचे हुए अंकों को हम चरण-दर-चरण नीचे क्यों ला रहे हैं आदि। इस तरह हम देख सकते हैं कि गणित से भय का कारण कक्षा में गणित पढ़ाए जाने का तरीका है जिसमें मानक एल्गोरिदम के चरण क्रमवार बिना किसी तार्किक आधार के याद रखना पड़ते हैं। असल में, कक्षाओं में मानक एल्गोरिदम से पढ़ाने में अवधारणा का निर्माण नहीं होता बल्कि अन्तिम उत्पाद प्राप्त करने की जल्दी होती है।

उदाहरण के लिए, आपने प्राथमिक कक्षा के बच्चों की कॉपी में बहुत सारे जोड़, घटाव, गुणा, भाग के सवाल मानक एल्गोरिदम द्वारा हल किए हुए देखे होंगे। जल्दी-से-जल्दी बच्चे abcd, 1234, वर्णमाला, बारहखड़ी, मानक एल्गोरिदम के चरण याद कर लें – यही अन्तिम उद्देश्य होता है।

सीखने के प्रतिफल दस्तावेज़ में कक्षा 1 और 2 के लिए बहुत-सी गतिविधियाँ दी हुई हैं जो उन प्रतिफलों को हासिल करने के लिए कक्षा में करवाई जानी चाहिए। परन्तु कक्षाओं में ज़्यादातर वक्त सिर्फ अक्षर-मात्रा सम्बन्ध सिखाने में ही जाता है और आम तौर पर उसका तरीका भी बोर्ड पर लिखकर दोहराव कराना ही देखने को मिलता है।

गणित का एक उदाहरण लेकर अधिगम क्षति को और बेहतर समझने की कोशिश करते हैं। आम तौर पर लॉकडाउन से पहले भी यह देखने में आता रहा है (नेशनल अचीवमेंट सर्वे की परीक्षाओं में, 'असर' की रिपोर्ट में व कक्षा अनुभव में) कि वे बच्चे जो अच्छे से पढ़ लेते हैं, मानक विधि से जोड़, गुणा, घटाना, भाग कर लेते हैं, वे भी इबारती प्रश्न नहीं कर पाते। मानक विधि से करते हुए भी बच्चों के जवाब कभी-कभी सही उत्तर से बेहद दूर होते हैं जो स्पष्ट इंगित करते हैं कि बच्चे शिक्षक द्वारा यांत्रिक रूप से बताए हुए चरण दोहरा रहे हैं। जैसे 606 में 6 का भाग देने पर यदि बच्चा 11 लिख देता है तो यह उत्तर साफ बताता है कि अवधारणा के निर्माण पर ही ठीक-से काम नहीं किया गया है।

यदि अवधारणा स्तर पर पर्याप्त काम किया गया होता तो बच्चे यह बता पाते कि वे चरण-दर-चरण जो प्रक्रिया कर रहे हैं वो वैसे ही क्यों करना है, उस सवाल को हल करने का क्या कोई और तरीका हो सकता है आदि। वे अपेक्षित उत्तर के बारे में

कुछ अनुमान ज़रूर लगा पाते, जैसे ऊपर दिए उदाहरण में यदि 606 वस्तुएँ 6 लोगों में बाँटनी हैं तो एक को सिर्फ 11 वस्तुएँ मिलें, ऐसा सम्भव नहीं है। बच्चों को केवल एक वही तरीका आता है जो शिक्षक ने बताया है। क्या हम शिक्षक द्वारा बताए गए इन चरणों को बच्चे द्वारा भूल जाने को अधिगम क्षति कहेंगे? जबकि असल में तो सीखना हुआ ही नहीं था।

नीचे दिए चित्र में आप देख सकते हैं कि बच्चे ने 1112 में से 21 को घटाया और उत्तर 911 आया है। यह देखकर ही समझा जा सकता है कि बच्चे का उत्तर 911 क्यों आया है (चित्र-2)। दूसरे चित्र में आप देख सकते हैं कि बच्चे ने 35 और 27 को जोड़कर 712 उत्तर लिखा है (चित्र-3)। इस बच्चे से जब मैंने सवाल पूछा कि "यदि तुम्हारे पास 35 चॉकलेट हैं और तुम्हें 27 चॉकलेट और दे दी जाएँ तो क्या तुम्हारे पास 700 से ज़्यादा चॉकलेट हो जाएँगी?" बच्चे ने

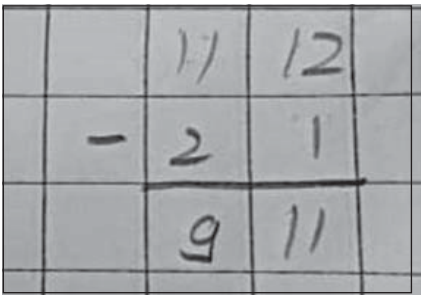

चित्र-2

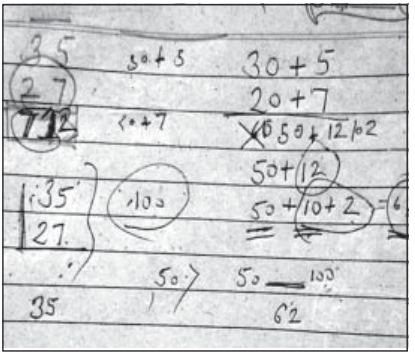

चित्र-3

जवाब दिया, "नहीं।" इसके बाद अगला सवाल पूछा, "क्या चॉकलेट 100 से ज़्यादा हो जाएँगी?" बच्चे ने कहा, "नहीं।" फिर मैंने बच्चे से पूछा, "50 से ज़्यादा चॉकलेट हो जाएँगी क्या?" बच्चे ने कहा, "हाँ।" मुझे बेहद आश्चर्य हुआ कि बच्चा इतना करीब अनुमान लगा पा रहा है। जबकि थोड़ी देर पहले यही बच्चा 35 और 27 जोड़कर 712 लिख रहा था।

इस उदाहरण से हम समझ सकते हैं कि बच्चा किस हद तक स्कूल में सिखाई गई जोड़ की प्रक्रिया को समझता है। बच्चे ने जोड़ करते वक्त दहाई को हासिल के रूप में नहीं लिया पर मौखिक बातचीत करते वक्त इस तरह की कोई परेशानी उसे नहीं हुई। गणित विषय में अभ्यास की भी ज़रूरत होती है ताकि इस तरह की गलतियाँ न हों, परन्तु यदि एल्गोरिदम समझकर किया जा रहा हो तो अपनी गलती बच्चे समझ भी

जाते हैं और स्वयं उसमें सुधार भी कर लेते हैं। जैसे बच्चे ने मेरे पास अपनी कॉपी लाने से पहले ही चित्र में सुधार कर लिया था। शुरुआत में बच्चे ने 17 में से 9 घटाने पर 18 लिखा था, फिर स्वयं ही 1 को काट दिया।

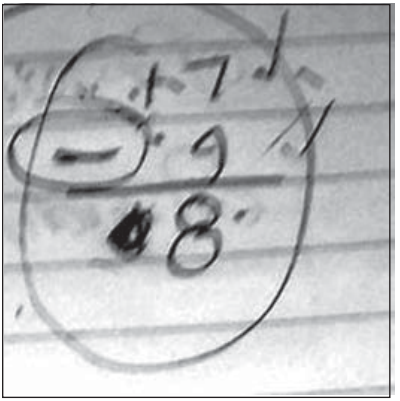

चित्र-4

भाषा की बात

भाषा की बात करें तो हम देखते हैं कि पढ़ना सिखाने की प्रक्रिया का पहला कदम मौखिक भाषा का विकास होना चाहिए परन्तु इसकी बजाय वर्णमाला और बारहखड़ी ही दिखाई देती है – लॉकडाउन के पहले भी और आज भी। यह विचार करने योग्य प्रश्न होगा कि कोई बच्चा जो कक्षा में लॉकडाउन से पहले कविता-कहानी पर बातचीत कर लेता था, क्या अब बातचीत करना भूल गया है? शायद नहीं। पढ़ना सिखाने की प्रक्रिया में अवधारणा निर्माण के अन्तर्गत सबसे पहले बच्चों को यह सीखना होता है कि जो हम बोल रहे हैं, वे सारे शब्द और वाक्य कुछ ध्वनियों से मिलकर बने हैं। इसलिए लिखित संकेतों से परिचित करवाने से पहले ध्वनि चेतना पर काम करना होता है।

बच्चे संकेतों से चिह्नों का मिलान कर पाने की क्षमता ज़रूर भूल सकते हैं परन्तु अवधारणा (ध्वनि चेतना) नहीं भूल सकते और अवधारणा याद रहने के कारण इस भूले हुए कौशल (अक्षर-ध्वनि सम्बन्ध) को बच्चे जल्दी ही हासिल कर लेंगे। ध्यान देने योग्य बात यह भी है कि बच्चे कौशल भूले हैं, अवधारणा नहीं। इसलिए यह कहा जा सकता है यदि हमने सचमुच कुछ सीखा है तो उसे भूल नहीं सकते। हाँ, अभ्यास की कमी से कुछ फर्क पड़ सकता है परन्तु यह सिर्फ कुछ समय की बात होगी। जैसे ही बच्चों को कुछ समय स्कूल में अभ्यास करवाया जाएगा, बच्चे अपने पुराने स्तर पर वापस आ जाएँगे।

मान लीजिए कि कक्षा-2 का बच्चा लॉकडाउन से पहले अपने बारे में तीन-चार वाक्य लिख लेता था। अब वह कक्षा-4 में आ गया है। हो सकता है, यह बच्चा अब लेखन में पहले से थोड़ी ज़्यादा गलती करे परन्तु थोड़े समय के अभ्यास के बाद वह अपने पहले वाले स्तर पर वापस आ जाएगा। उदाहरण के लिए, चित्र-5 में आप

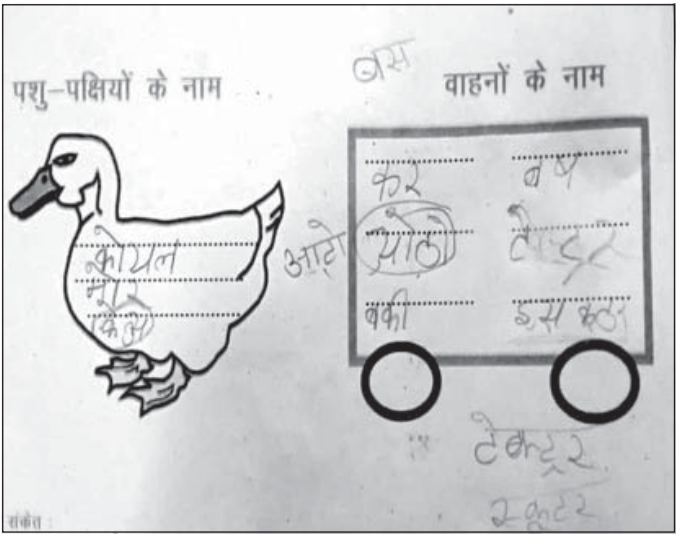

चित्र-5

देख सकते हैं कि 'ऑटो' और 'स्कूटर' शब्द किस तरह लिखे गए हैं। बच्चे ने 'ट' ध्वनि को 'ठ' के चिह्न से जोड़ रखा है। साथ ही, बच्चे ने 'ट्रेक्टर' शब्द में 'ट' का चिह्न सही लिखा है। बच्चा यह अवधारणा नहीं भूला है कि शब्द ध्वनियों से मिलकर बनते हैं इसलिए किसी शब्द में जितनी ध्वनियाँ हैं, उतने अक्षर बच्चे के लिखे हुए शब्दों में दिख रहे हैं। इसी तरह 'बस' शब्द में दो ध्वनियाँ हैं, तो बच्चे ने दो अक्षर लिखे हैं 'बष'।

'असर' की रिपोर्ट के आँकड़े

'असर' 2018 की रिपोर्ट यह बताती है कि कोरोना महामारी के पहले भी बच्चों के सीखने की स्थिति बहुत बेहतर नहीं थी और कितना सीखना-सिखाना हो रहा है, उस पर प्रश्न चिह्न खड़े करती है। नेशनल अचीवमेंट सर्वे के नतीजे भी यही बताते हैं।

कक्षा-3 में कक्षा-2 के स्तर का पाठ पढ़ पाने वाले बच्चों की स्थिति

वर्ष	प्रतिशत
2016	25.1
2018	27.2

कक्षा-5 में कक्षा-2 के स्तर का पाठ पढ़ सकने वाले बच्चों की स्थिति

वर्ष	प्रतिशत
2016	47.9
2018	50.3

कक्षा-3 में घटाव कर सकने वाले बच्चों की स्थिति

वर्ष	प्रतिशत
2016	26
2018	27.8

कक्षा-5 में भाग कर सकने वाले बच्चों की स्थिति

वर्ष	प्रतिशत
2016	26
2018	27.8

सीखने की परिभाषा

सीखना कैसे होता है, सिखाने वाले की भूमिका क्या होती है – इनकी परिभाषाएँ समय के साथ बदल गई हैं। एक समय पर बच्चों को 'तेबुला रसा' मतलब खाली स्लेट समझा जाता था और शिक्षक को उस खाली स्लेट पर लिखने वाला। परन्तु आज शिक्षक को एक सहजकर्ता समझा जाता है और बच्चे को खाली स्लेट नहीं बल्कि सीखने की प्रक्रिया में एक सक्रिय प्रतिभागी के रूप में देखा जाता है। ज्ञान दिया नहीं जाता बल्कि हर सीखने वाला इसका निर्माण स्वयं करता है। यह बदलाव आज हम ज्ञानार्जन की प्रक्रिया में स्वीकार करते हैं। सीखने को लेकर हमारी समझ शोध के माध्यम से यहाँ तक विकसित हुई है परन्तु शालाओं में इस समझ का पहुँचना अभी बाकी है। स्कूलों में अब भी व्यवहारवाद हावी है जिसमें मुख्य पेडागॉजी बच्चों द्वारा लिखकर या बोलकर दोहराव करना, व शिक्षक द्वारा पाठ (कहानी/कविता) और निर्देशों को पढ़कर समझाना ही है।

असल मायने में लर्निंग न होना भी बच्चों द्वारा स्कूल में सीखी गई चीज़ें भूलने (अधिगम क्षति) की बड़ी वजह है। इसे शायद अधिगम क्षति कहना भी ठीक नहीं होगा। उदाहरण के लिए, बच्चों को 10 तक पहाड़े याद थे और अब दो साल बाद वे भूल गए। बच्चों ने ये पहाड़े संख्याओं के साथ खेलते हुए याद नहीं किए थे, ये तो उन्होंने दोहरा-दोहराकर, बिना इस बात को जाने रटे थे कि पहाड़ों का इस्तेमाल कहाँ किया जाता है। आप देखेंगे कि स्कूलों में बच्चों को सात का पहाड़ा आता है परन्तु यदि उनसे पूछा जाए कि सात रुपए की सात चॉकलेट खरीदने के लिए कितने रुपए देने होंगे तो वे नहीं बता पाते।

बच्चों का अवलोकन

हर बच्चा सीखना चाहता है। वह भी जो कक्षा में बहुत उत्सुक नज़र नहीं आता या कम बोलता है। यदि बच्चे भयविहीन माहौल में सीख रहे होते हैं तो वे बहुत सक्रिय रहते हैं। मैं अपनी इस बात को कक्षा के एक अनुभव द्वारा समझाना चाहूँगी।

एक स्कूल में हमने कुछ अवलोकन

करने के लिए दो-दो बच्चों के समूह बनाए जिसमें एक पढ़ सकने वाला बच्चा था और दूसरा न पढ़ सकने वाला बच्चा। इसी तरह के एक समूह में प्रीति और सीमा थीं। मैडम प्रीति द्वारा कुछ न सीख पाने की कई बार चर्चा करती रही हैं। उन्होंने बताया कि प्रीति पहले ट्रेन में खेल दिखाने का काम करती थी। वह थोड़ी शान्त और खोई-सी नज़र आती थी। मैंने भी मैडम की बात पर सहमति दी और कहा कि शायद प्रीति नहीं सीख पाएगी। हमने दोनों को दीवार पर लगी कविताओं को पढ़ने के लिए भेजा।

सीमा को अच्छी तरह पढ़ना आता था। वह पहले खुद पढ़कर बताती, फिर प्रीति से पढ़ने के लिए कहती। परन्तु प्रीति द्वारा न पढ़ पाने पर सीमा जल्दी-से आगे की लाइन पढ़कर बता देती। इस पर प्रीति ने बुलन्द आवाज़ में सीमा से कहा, "यदि तुम इस तरह आगे-आगे पढ़ती जाओगी तो मैं कैसे पढ़ना सीख पाऊँगी?" यह सुनकर मुझे अपने कहे पर ग्लानि महसूस हुई और मैडम का ध्यान भी मैंने इस ओर दिलाया। हम कई शैक्षिक दस्तावेज़ों में पढ़ते हैं – हर बच्चा सीख सकता है। सीखने की रफ्तार से, बुद्धि होने या नहीं होने का कोई ताल्लुक नहीं होता। परन्तु इन सबके बावजूद जब कोई बच्चा नहीं सीख पाता तो हम कहीं-न-कहीं इसकी वजह बच्चे में तलाशने की कोशिश करने लगते हैं।

हमें कक्षाओं में बच्चों की सीखने में सक्रिय भागीदारी, जो पढ़ाया जा रहा है उसका दैनिक जीवन से जुड़ाव, भयविहीन माहौल, बच्चों के लिए सम्मान, बच्चों में स्कूल के प्रति लगाव, अपनी बात खुलकर कहने की आज़ादी और आत्मविश्वास को सुनिश्चित करना होगा, तब ही सही मायने में अधिगम होगा। और यदि बच्चे सीखा हुआ भूल भी गए तो थोड़ा वक्त और मौका मिलने पर वे अपने पुराने स्तर पर वापस आ जाएँगे।

इस लेख में यह नहीं कहा जा रहा कि स्कूल बन्द होने के कारण सीखने का नुकसान नहीं हुआ है। मैं कहना यह चाह रही हूँ कि 'बच्चे असल में कितना सीख रहे हैं और कितना रट रहे हैं', यह बहुत महत्वपूर्ण और विचारणीय है और इसी वजह से अधिगम क्षति इतनी विकराल नज़र आ रही है।

मीनू पालीवाल: अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन, सागर, म.प्र. में 2017 से काम कर रही हैं। इससे पहले वे छह वर्ष तक आईसीआईसीआई बैंक में कार्यरत रहीं। मन में आने वाले सवालों के जवाब की तलाश में वे शिक्षा और शिक्षण प्रक्रिया से जुड़ीं। प्राथमिक कक्षा के बच्चों के साथ काम करने में विशेष रुचि।

सभी फोटो: मीनू पालीवाल।

सोचने की प्रक्रिया का एक अध्ययन
आचार्य काका साहब कालेलकर के साथ एक साक्षात्कार

सुरेन्द्र नाथ त्रिपाठी

दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर (1885-1981), जिन्हें काका कालेलकर के नाम से जाना जाता है, एक भारतीय स्वतंत्रता कार्यकर्ता, पत्रकार, समाज सुधारक और महात्मा गांधी के दर्शन शास्त्र और विधियों के प्रख्यात अनुयायी थे। वे भारत के प्रतिष्ठित विचारकों और लेखकों में से एक थे। उन्होंने विनम्रता से मुझे साक्षात्कार की अनुमति दी। कुछ प्रश्नोत्तर सर्जनात्मकता के विद्यार्थियों के लिए रुचिकर होंगे। इसलिए यह साक्षात्कार प्रस्तुत किया जा रहा है।

प्रश्न: कभी-कभी बहुत तेज़ी-से विचार आते हैं और लगता है उन्हें लिख लेना चाहिए क्योंकि वह क्षण फिर आए न आए। क्या आपको कभी ऐसा अनुभव हुआ है?

उत्तर: हाँ, ऐसे क्षण बहुत अमूल्य होते हैं। मुझे विचार आता है, पर हमेशा किसी सन्दर्भ में। यह मेरी गहन सोच या किसी विशेष स्थिति से उत्पन्न हो सकता है। यह आवश्यक होता है कि विचार को दो प्रकार से लिखा जाए:

- स्थिति, प्रवृत्ति या चिन्तन के सन्दर्भ में जो उस विचार को जन्म देते हैं;
- सार्वभौमिक अनुप्रयोग के रूप में जिसे विभिन्न क्षेत्रों में प्रयोग किया जा सके।

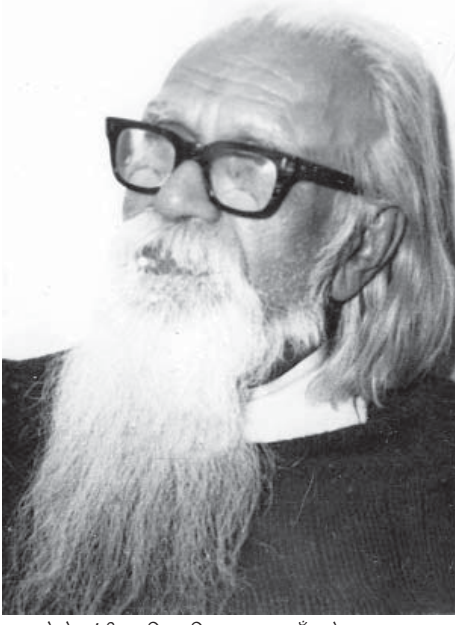

यह फोटो गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, जलगाँव से साभार।

जब अवसर चला जाता है और उसे आज़माने वाली भट्टी भी गर्म नहीं रह जाती, तब विचार याद नहीं रहता। फिर उसे वापस लाना कठिन होता है। जब फिर से कभी समरूप या उपयुक्त स्थिति उत्पन्न होती है, तब यह अपने पुराने बल के साथ वापस आ जाता है। यह विचार इतना ताकतवर होता है कि हमेशा के लिए खो नहीं सकता। पर संकोचवश, कुछ समय के लिए स्वयं को छुपा ज़रूर लेता है।

प्रश्न: कभी-कभी ऐसा होता है कि हमारे मन में कोई विचार आ जाता है जिसे हम विकसित करना स्थगित कर देते हैं, और यह हमारे दिमाग के किसी कोने में चला जाता है। वहाँ यह विकसित होकर एक दिन परिपक्व हो जाता है। क्या आपको कभी ऐसा अनुभव हुआ है?

उत्तर: इसका उत्तर आंशिक रूप से मैंने पहले दिया है। मैंने कभी किसी विचार को किताब के रूप में लिखने की कोशिश नहीं की। मुझे विचार को विभिन्न क्षेत्रों में लागू करने की आदत है, और इस अप्रत्याशित प्रयोग से मेरे

मित्र अक्सर अचम्भित होते हैं। मज़ाक में, मैं उन्हें जवाब देता हूँ कि उपमा और रूपक का महत्व उनके चौंक जाने से होता है। मेरा दिमाग एक-साथ कई स्तरों पर काम करता है जिसके कारण एक विचार को कई विपरीत विचार और अनुभव चुनौती देते हैं। तब मुझे सिन्थेसिस यानी संश्लेषण करना पड़ता है। मैंने स्वयं को संश्लेषण में काफी निपुण पाया है, क्योंकि मुझे किसी विचार से प्यार नहीं होता, बल्कि मुझे व्यापक जीवन से प्यार है। जीवन की समग्रता के प्रति निष्ठा संश्लेषण में मदद करती है। आप इसे किसी विचार का परिपक्व होना कह सकते हैं।

यह मेरा निरन्तर अनुभव रहा है कि विचार न केवल चेतन स्तर पर परिपक्व होते हैं, बल्कि वे कभी-कभी अवचेतन में बहुत बेहतर रूप से परिपक्व होते हैं। चेतन स्तर समुद्र की सतह के समान होता है जबकि अवचेतन उसकी गहराई के समान। इसीलिए अवचेतन में मौलिक विचारों का बेहतर विकास होता है।

प्रश्न: कुछ लेखक लिखने के लिए किसी विशेष मनोदशा, स्वास्थ्य की स्थिति या परिस्थिति के अनुकूल होने को तरजीह देते हैं। इस बारे में आपका क्या अनुभव रहा है?

उत्तर: मैंने बहुत-से लोगों से मनोदशा के बारे में सुना है, किन्तु मेरा अनुभव इसके एकदम विपरीत है। किसी विचार को विकसित करने या उसे लिखित रूप में लाने के लिए मुझे किसी विशेष मनोदशा, स्वास्थ्य की स्थिति या परिस्थिति की आवश्यकता नहीं होती है। मेरा मन हमेशा ताज़ा और तैयार रहता है, उस प्रेमी की तरह जो अपने प्रिय की उपस्थिति में प्रेम से ओत-प्रोत होता है।

किन्तु एक विशेषता मैंने अपने आप में पाई है। मेरी विचार प्रक्रिया और मेरा विचार विकसित करना काफी हद तक उस व्यक्ति पर निर्भर करता है जिससे मैं बात कर रहा हूँ या जिससे लिखवा रहा हूँ। आपको आश्चर्य होगा कि मैं कभी भी अपने हाथ से नहीं लिखता। मेरी उँगलियों में कोई खराबी नहीं है लेकिन जब मैं लिखवाता हूँ तब मेरा दिमाग सबसे अच्छा काम करता है। शिक्षाविद् उस गाय की तरह होता है जो बछड़े के माँगने पर दूध देती है। पहले मैं केवल उन्हीं लोगों से लिखवा पाता था जिनके साथ कुछ अपनापन था। अब मैंने इस कमज़ोरी पर काबू पा लिया है। फिर भी, अभी भी मेरी विचार प्रक्रिया उस व्यक्ति पर निर्भर करती है जिसे मैं सम्बोधित करता हूँ। मेरी व्यग्रता उस व्यक्ति को मेरे विचारों और धारणाओं को स्वीकार कराने की रहती है। सम्बोधित व्यक्ति ही मेरी एकमात्र चिन्ता बन जाता है।

प्रश्न: क्या आप किसी ऐसी स्थिति को याद कर सकते हैं जब किसी विशेष मुद्दे पर अधिकांश लोगों की

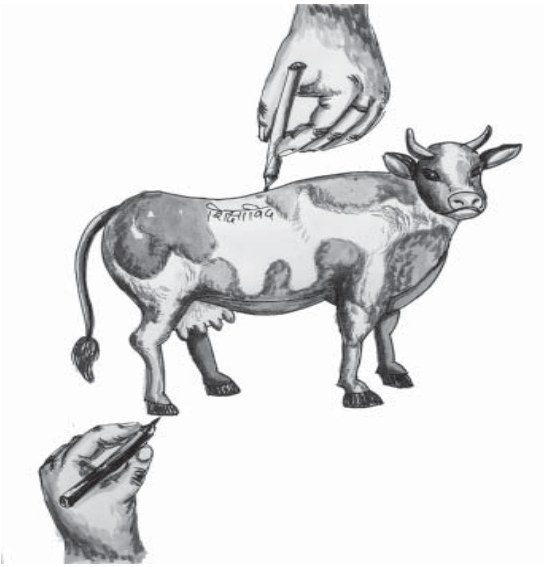

राय आपकी राय से अलग रही हो और आपने बिलकुल नया दृष्टिकोण प्रस्तुत किया हो, जिसके बारे में किसी ने सोचा भी न हो? क्या आप अपने बचपन का कोई ऐसा अनुभव याद कर सकते हैं?

उत्तर: बचपन में यह मेरे लिए सबसे शर्मनाक स्थिति थी, क्योंकि मैं अपने बड़ों की राय स्वीकार नहीं कर पाता था और उनके प्रति सम्मान के कारण अस्वीकार या विरोध भी नहीं कर पाता था जिसके कारण मुझे घुटन होती थी। बचपन में भी मैं अपने दृष्टिकोण के बारे में दृढ़ था।

प्रश्न: सर्जनात्मक सोच के कुछ प्रकार निम्नलिखित हैं:

1. किसी वस्तु या स्थिति का नया उपयोग खोजना
2. दोषों को देखना और सुधार का सुझाव देना
3. किसी दृष्टिकोण के निहितार्थ देखना
4. किसी विचार का विस्तार करना
5. एक क्षेत्र के विचार को दूसरे क्षेत्र में लागू करना

उपरोक्त में से आपकी सोच की प्रमुख विशेषता कौन-सी है? क्या आप कोई ऐसा अनुभव याद कर सकते हैं जो आपके द्वारा कही गई बातों को स्पष्ट कर सके?

उत्तर: जब मैंने बी.ए. में प्रवेश लिया तब अपने वैकल्पिक विषयों के रूप में तर्क और नैतिक दर्शन को चुना।

हमारे प्रोफेसर एक गम्भीर प्रकृति के व्यक्ति थे और अपने छात्रों में रुचि रखते थे। उन्होंने हमसे पूछा कि हमने इन विषयों को क्यों चुना। मैं गणित में अच्छा था और रैंगलर परांजपे से बहुत प्रभावित था। प्रोफेसर साहब को भी उम्मीद थी कि मैं गणित चुनूँगा।

मैंने अपने प्रोफेसर को जो उत्तर दिया वह इसलिए खास था क्योंकि वह मेरे लिए मौलिक था। मैंने कहा, "मैंने कुछ धार्मिक साहित्य और सन्तों के लेखन को पढ़ा है। मैंने तर्कवादी साहित्य भी पढ़ा है और सामाजिक सुधार में मेरी गहन रुचि है। इसलिए

मुझे गहराई से सोचने की आदत है। लेकिन मैं विभिन्न प्रकार की सोच का पता लगाना चाहता हूँ।"

मैंने इन्हीं शब्दों का प्रयोग किया था। मैं कहना चाहता था कि मुझे जीवन के विभिन्न दृष्टिकोणों को समझकर एक व्यापक दर्शन विकसित करने में रुचि है। मुझे एक मास्टर आइडिया के सभी निहितार्थ निकालने में सक्षम होना चाहिए। यदि कोई एक क्षेत्र के बारे में कुछ कहता है, तो मुझे यह अनुमान लगाने में सक्षम होना चाहिए कि उसके विचार और दृष्टिकोण अन्य क्षेत्रों में क्या होंगे, यदि वह अपनी सोच पर स्थिर है। मैंने इस उम्मीद में दर्शनशास्त्र को चुना था कि वह मुझे जीवन के विभिन्न पहलुओं की स्पष्ट और व्यापक समझ बनाने में मदद करेगा।

दुर्भाग्य से, मैं जिन प्रोफेसर को उनके जीवन और सेवाओं के लिए सबसे अधिक सम्मान करता था, वे मेरे उत्तर के पूर्ण निहितार्थ को नहीं पकड़ पाए। उन्होंने बस इतना कहा, "तुम वही करो जो तुम्हें सही लगता है; लेकिन मैं तुम्हें पूर्वी और पश्चिमी दर्शन का अध्ययन व दोनों की तुलना करने की कोशिश की सलाह देता हूँ।"

उन्होंने जो सुझाव दिया, उस पर मुझे कोई आपत्ति नहीं थी लेकिन उनका दृष्टिकोण केवल विद्वता और थोड़ी-सी देशभक्ति का था। मुझे पता है कि मेरी इच्छा इससे ज़्यादा गहरी थी। मैंने उन सुझावों को वहीं छोड़ दिया, लेकिन मैं इस बातचीत को नहीं भुला पाया हूँ।

अब, आपके प्रश्न (1) के उत्तर में, हाँ, मैं किसी वस्तु या स्थिति का बेहतर उपयोग खोजने के लिए संघर्ष करता हूँ, लेकिन जब मेरे पास एक विचार होता है तब अन्य चीज़ें मुझसे बच निकलती हैं।

(2) मुझे लगता है कि दोषों को देख पाना और सुधार का सुझाव देना सभी के लिए सामान्य है, सिवाय उन लोगों के जो आदेश लेने और यंत्रवत् पालन के आदि होते हैं।

यात्रा करने, नए देशों और विभिन्न प्रकार की संस्कृतियों को देखने के मेरे जुनून ने मुझे विचारों और स्थितियों को उच्च दृष्टिकोण से देखने में मदद की है। लोग इस तरह के सुधारों और मदद को पसन्द नहीं करते हैं, और इसलिए एक व्यक्ति को अपने सुझावों को अपने पास ही रखना पड़ता है। मुझे अक्सर समाज की नाराज़गी झेलनी पड़ी है, क्योंकि मैं अपने मन की बात अपने तक सीमित नहीं रख पाता हूँ।

(3) मैं सोचता हूँ कि किसी दृष्टिकोण के निहितार्थ को देखना सबसे महत्वपूर्ण है। कुछ निहितार्थ स्वतः ही एकाएक मेरे सामने उपस्थित हो जाते हैं और कुछ मेरे सामने तभी आते हैं जब मैं प्रतिकूल वातावरण में होता हूँ और तब मुझे संश्लेषण या

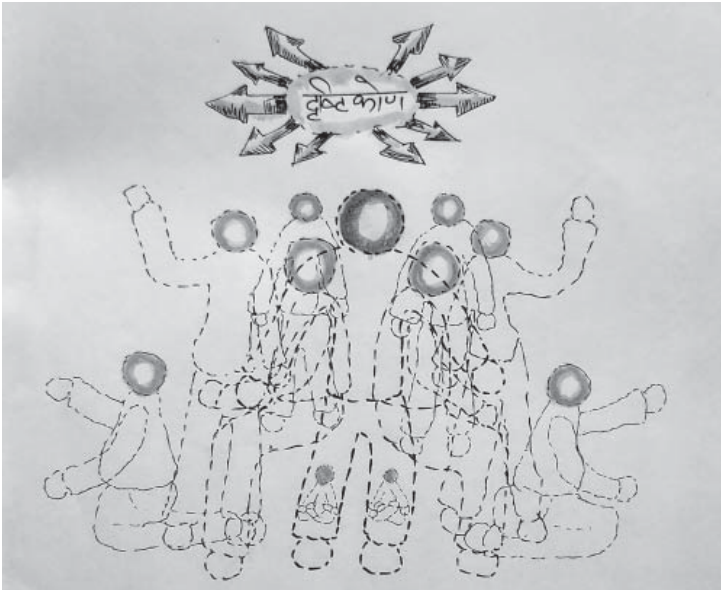

सामंजस्य के लिए संघर्ष करना पड़ता है।

(4) किसी विचार का विस्तार करना हर योग्य शिक्षक का कर्तव्य है। सर्वप्रथम एक शिक्षाविद् होने के नाते मैं जीवन भर विचारों का विस्तार करता रहा हूँ। मेरी साहित्य शैली में जो आकर्षण है, वह भाषा और अभिव्यक्ति के प्रेम का परिणाम नहीं है, बल्कि आकर्षक तरीके से विचार के विस्तार करने की मेरी चिन्ता के कारण है।

व्याख्या

यह साक्षात्कार उस समस्या पर प्रकाश डालता है जिसका एक सर्जनात्मक व्यक्ति को सामना करना पड़ता है। टॉरेन्स (1962) ने अपने लेखन में बच्चे की सोच पर कम नियंत्रण रखने और उसके विचारों की अधिक प्रशंसा करने का दृढ़ता से अनुरोध किया है। इस सम्बन्ध में काका साहब ने जो कहा कि उन्हें बचपन में कैसा लगा जब उनके बुज़ुर्ग उन्हें समझने में असफल रहे, बहुत प्रासंगिक है। कॉलेज के दिनों में एक प्रोफेसर के साथ उनके अनुभव से पता चलता है कि जब काका साहब दर्शनशास्त्र के विभिन्न दृष्टिकोणों के एक नए संश्लेषण को प्राप्त करने के बारे में सोच रहे थे, तब उनके प्रोफेसर उनकी इस तीव्र इच्छा को समझने में असमर्थ रहे। पूर्वी और पश्चिमी दर्शन की तुलना

करने के लिए युवा कालेलकर को उनकी सलाह वही थी जो कोई भी शिक्षक आम तौर पर अपने छात्रों को देता। यह उस सन्दर्भ में काफी असंगत थी जिस सन्दर्भ में दी गई थी।

इस साक्षात्कार से काका साहब के सोचने और लिखने के तरीके का एक दिलचस्प पहलू सामने आया, जो उन लोगों को श्रुतलेख देने के बारे में था जिनके साथ उन्होंने एक तरह की आत्मीयता महसूस की। यदि किसी कारणवश इस आत्मीयता में कमी होती है तो उनके विचार भी प्रतिबन्धित हो जाते हैं। यह सर्जनात्मक सोच के भावनात्मक पहलू पर प्रकाश डालता है। महान विचारकों के जीवन के ऐसे कई उदाहरण हैं जो सर्जनात्मक उपज पर मित्रता और विचारों के आदान-प्रदान के प्रभाव को दर्शाते हैं।

प्रतिभाशाली व्यक्ति को एक समझदार और सहानुभूतिपूर्ण श्रोता की ज़रूरत होती है जो उनके भीतर से सर्वश्रेष्ठ को निकाल सके। सोच सिर्फ एक अभ्यास नहीं है जो बिना किसी भावनात्मक समर्थन के चलती रहे।

विभिन्न क्षेत्रों में एक विचार को लागू करने और रूपकों व उपमाओं के अप्रत्याशित अनुप्रयोगों को प्राप्त करने, साथ ही कई स्तरों पर विचार करने और विभिन्न क्षेत्रों में एक विशेष दृष्टिकोण के निहितार्थों का अर्थ ढूँढ़ने ताकि यह अनुमान लगाया जा सके कि व्यक्ति, जिसका कोई एक दृष्टिकोण है, दूसरे सभी क्षेत्रों में क्या स्थान लेगा यदि वह अपने स्वयं के अनुरूप है, के विषय में काका साहब की टिप्पणी विचारों की दुनिया में विचारों की व्यवस्था और पुनर्व्यवस्था में उनकी गहन रुचि को इंगित करती है।

कार्ल आर रॉजर्स (1959) ने सर्जनात्मक प्रतिभाशाली व्यक्ति के इस गुण को 'तत्वों और अवधारणाओं के साथ खेलने की क्षमता' के रूप में वर्णित किया है। रॉजर्स इस प्रक्रिया की व्याख्या इस प्रकार करते हैं, "विचारों, रंगों, आकृतियों, सम्बन्धों के साथ सहज रूप से खेलने के लिए – तत्वों की असम्भव स्थिति को सुनियोजित करना, निराधार परिकल्पनाओं को आकार देना, किसी चीज़ को समस्यात्मक बनाना, हास्यास्पद को व्यक्त करना, किसी आकार को एक से दूसरे में परिवर्तित करना, असम्भव समकक्षों में बदलना।" रॉजर्स के अनुसार, इससे ही एक काल्पनिक अनुमान, जीवन को एक नए और महत्वपूर्ण तरीके से देखने का सर्जनात्मक दृष्टिकोण, उत्पन्न होता है।

गिलफर्ड (1956) के वर्गीकरण के अनुसार, मानसिक संचालन और उनके उत्पाद जो काका साहब की सोच की विशेषता बताते हैं, इस प्रकार हैं:

- जो असम्बन्धित प्रतीत होता है, उसके बीच नए सम्बन्धों को देखना;
- एक स्थिति को फिर से परिभाषित करना, जिसे गिलफर्ड द्वारा परिवर्तन कहा गया है;
- उन निहितार्थों को देखना जो प्रत्याशाओं, भविष्यवाणियों, ज्ञात और सन्दिग्ध पूर्ववृत्तों, सहवर्ती या परिणामों के रूप में जानकारी के बहिर्वेशन (extrapolation) हैं।

इन सभी का मौलिकता व सर्जनात्मकता से गहरा सम्बन्ध है और ये काका साहब की सोच में बहुलता से पाए जाते हैं, जैसा कि उन्होंने स्वयं वर्णन किया है।

यह संक्षिप्त वर्णन एक विचारक के मानस की एक झलक देता है। इसमें शिक्षक के लिए एक महत्वपूर्ण सन्देश है। क्या हमारा अध्यापन ऊपर वर्णित विचारधारा की ओर ले जाता है? क्या हमारे छात्र नए विचारों की चुनौती का सामना करते हैं, स्वयं सोचते हैं, स्वयं निष्कर्ष पर पहुँचते हैं या वे केवल पुस्तक और उसकी व्याख्याओं से बँधे रहते हैं? इससे भी अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि यदि किसी शिक्षक को ऐसा छात्र मिलने का सौभाग्य प्राप्त होता है जो स्वयं सोचता है तो क्या वह शिक्षक उसे समझने और प्रोत्साहित करने में सक्षम है, या वह बँधे-बँधाए तरीके से कोई घिसी-पिटी राय देते हैं।

सुरेन्द्र नाथ त्रिपाठी (1922-2003): शिक्षा में सर्जनात्मकता की अनिवार्यता और महत्व, स्कूली शिक्षा में सर्जनात्मकता को सम्मिलित और प्रोत्साहित करने के लिए ज़रूरी शैक्षणिक सामग्री और पद्धतियों के निर्माण, विकास, प्रयोग और प्रसार में अग्रणी भूमिका निभाई। संगीत, कला, साहित्य, खेलों, ब्राह्मी जैसी प्राचीन लिपियों और विभिन्न धर्मग्रन्थों में उनकी रुचि और ज्ञान की झलक उनके सर्जनात्मकता से सम्बन्धित कार्य और लेखन में मिलती है।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: अर्चना उपाध्याय: रूसी भाषा की अनुवादक और इंटरप्रेटर हैं। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली की पूर्व छात्रा हैं और इससे पहले हिन्दुस्तान एयरोनॉटिक्स लिमिटेड, हैदराबाद में इंटरप्रेटर के रूप में काम कर चुकी हैं। दिल्ली में रहती हैं। सम्पर्क - archanaupadhyay.in@gmail.com

सभी चित्र: स्वाति कुमारी: बिहार के एक विस्थापित परिवार में जन्मीं स्वाति ने दिल्ली के कॉलेज ऑफ आर्ट से पेंटिंग में बी.एफ.ए. और अंबेडकर यूनिवर्सिटी, दिल्ली से विज़ुअल आर्ट्स में एम.ए. किया है। उनकी खोज इस बात के इर्द-गिर्द घूमती है कि शरीर और स्थान कैसे कार्य करते हैं, प्रतिक्रिया करते हैं, बातचीत करते हैं और एक-दूसरे को प्रतिक्रिया देते हैं।

यह साक्षात्कार एजुकेशनल ट्रेंड्स, 1973, 8 (1-4) में प्रकाशित 'ए स्टडी इन द थिंकिंग प्रोसेस: एन इंटर्व्यू विद आचार्य काका साहब कालेलकर' का हिन्दी अनुवाद है।

शिक्षा और मनोविज्ञान: नाज़ुक कड़ियों को समझने की ज़रूरत

कमला मुकुन्दा के साथ बातचीत

क्या आपने उन मनोवैज्ञानिकों के बारे में पढ़ा है जो एक ज़माने में चूहों और कुत्तों पर अपने प्रयोग किया करते थे? कमला मुकुन्दा *व्हॉट डिड यू आस्क ऐट स्कूल टुडे?* नाम की अपनी एक किताब में ऐसे ही मनोविज्ञान की खबर ले रही हैं। अपनी किताब में वे अध्यापकों से मनोविज्ञान पर बहुत गम्भीरता से ध्यान देने का आह्वान करती हैं, और साथ ही शिक्षक-शिक्षकों से भी अर्ज़ करती हैं कि वे ऐसा मनोविज्ञान पढ़ाएँ जो कक्षा के भीतर के व्यवहार को एक आलोचनात्मक रूप से नया आयाम दे सके। अपने अध्यापन के तकरीबन दो दशकों के अनुभवों के बारे में बात करते हुए वे मानक आकलन के स्थान पर 'असली आकलन' (ऑथेन्टिक असेसमेंट) की ओर जाने की ज़रूरत पर ज़ोर देती हैं।

? **विवेक वेलांकी:** *व्हॉट डिड यू आस्क ऐट स्कूल टुडे?* में आपने लिखा है कि अध्यापकों और शिक्षाविदों के तौर पर हमें मनोविज्ञान पर बहुत गम्भीरता से ध्यान देना चाहिए। ऐसा कहने के पीछे ठोस ज़रूरत क्या है?

कमला मुकुन्दा: मैंने तकरीबन 8 साल तक स्कूलों में पढ़ाया है। मैं मिडिल स्कूल और सीनियर स्कूल को पढ़ाती हूँ। उससे पहले मैं शैक्षिक मनोविज्ञान में पीएच.डी. कर रही थी। उस वक्त मेरे ज़हन में रिसर्च और इसी तरह के क्षेत्रों में करियर बनाने के सपने थे। इसके

बाद कुछ इत्तेफाक ऐसे हुए कि मैं बैंगलोर में चल रहे इस बेमिसाल स्कूल में पढ़ाने आ गई और फिर मैं बस यहीं की होकर रह गई। मुझे पीछे मुड़कर देखने की ज़रूरत ही नहीं पड़ी और मैं शोध वाली ज़िन्दगी की तरफ लौट ही नहीं सकी। मुझे अध्यापिका होने में बड़ी गहरी तसल्ली मिल रही थी।

खैर, धीरे-धीरे सहकर्मियों के साथ, अन्य अध्यापिकाओं/अध्यापकों के साथ, अभिभावकों के साथ चर्चाओं के दौरान और खुद अपने काम के दौरान मैंने पाया कि जो सवाल और मसले मुझे एक शोध विद्यार्थी के रूप में उत्तेजित करते थे, वही यहाँ भी बार-बार मेरे सामने आ रहे हैं। बल्कि अब ये सवाल और भी ज़्यादा फौरी व ठोस शक्ल में मेरे सामने थे! मिसाल के तौर पर, कोई अध्यापिका आकर बड़े यकीन से दावा करती कि फलाँ उम्र के बच्चे फलाँ-फलाँ चीज़ों को करने के लायक नहीं होते, या कोई यह दावा करता कि मुझे पता ही नहीं चलता कि कोई विद्यार्थी इतना होशियार होते हुए भी गणित में कैसे पिछड़ सकता है! यानी लगन, विकास और बुद्धि से जुड़े सवाल और ऐसे ही बहुत सारे अन्य मसले हर रोज़ 5-10 मिनट की उस चाय की चर्चा में उठ जाते थे। मैं सोचती, "क्या मैं अपनी सारी पढ़ाई-लिखाई के दम पर इन्हें कुछ बता सकती हूँ?" मगर सवाल यह था कि दशकों के धरातल पर फैले शोध और आपस में गुँथे इन सारे विचारों को सरल और संक्षिप्त ढंग से पेश कैसे किया जाए? पाँच मिनट के टी-ब्रेक में आप कैसे इन सब बातों को समेट सकते हैं?

तो दरअसल, एक तरह की उत्तेजना भरी हताशा के चलते ही मैंने तय किया कि मैं फिर से लिखना शुरू करूँगी, और फिर मैं सबको अपनी सोच बताऊँगी। अगर लोगों के पास वक्त होगा तो उन्हें पढ़ने के लिए भी देती रहूँगी। और मैं इसी तरह से अपना काम करने लगी। मेरे पास हर रोज़ दैनिक अध्यापकीय व्यवहार के सवाल आ रहे थे। अब मैं अपने ज़हन में

शोधों और साहित्य के विशाल भण्डार से रोज़ रूबरू होने लगी थी। जितना हो पाता, मैं उतना पढ़ती, उसको पचाती और फिर उसको लिखती। बेशक, मैं जो कुछ लिखती, उसमें मेरा अपना दृष्टिकोण भी जुड़ जाता था मगर कोशिश यही करती कि सब-कुछ बेबाक और सपाट ढंग से, और जितना हो सके, सीधे अन्दाज़ में लिखूँ। मैंने यह भी कोशिश की कि ज़्यादा-से-ज़्यादा सरल भाषा में लिखूँ, मगर कई बार चीज़ों को एक हद से ज़्यादा सरल भी नहीं बनाया जा सकता था। अगर आप उससे ज़्यादा कोशिश करते हैं तो चीज़ें अति सरलीकृत और सतही लगने लगती हैं, उनकी बारीकियाँ मिट जाती हैं जबकि जिन सवालों से मैं जूझ रही थी, उनमें से कुछ वाकई पेचीदा थे। फिर मुझे यह भी लगा कि अध्यापकों को इस तरह बेवकूफ बनाने का कोई मतलब नहीं है, उन्हें हर वो चीज़ बताने की ज़रूरत है जो उन्हें जाननी चाहिए; सिर्फ सीधी सरल बातें कहने की कोई ज़रूरत नहीं है।

इस तरह, आखिरकार धीरे-धीरे यह किताब एक शक्ल लेने लगी। और अब मुझे इतनी खुशी है कि इतने साल बाद भी लोग इसको मज़े से पढ़ रहे हैं। कहीं-कहीं वह मुश्किल भी हो जाती है; कई बार लोग कहते हैं कि मुझे नोटबुक साथ लेकर किताब पढ़नी पड़ी। मगर यह तो अच्छी बात है! या कोई आकर कहती कि मैंने किसी के साथ बैठकर पूरी किताब पढ़ डाली। कितने कमाल की बात है! यह कोई साहित्यिक रचना नहीं है; इसको आपको एक बार नहीं बार-बार पढ़ना पड़ सकता है। कुछ लोगों ने इसके सन्दर्भ और स्रोत भी पढ़े और इसके आधार पर आगे भी अध्ययन किए हैं, और कम-से-कम दो लोगों को तो मैं जानती हूँ जो इसको पढ़ने के बाद लिखने के लिए प्रेरित हुए हैं। मुझे इस तरह की बातें सुनकर बड़ी तसल्ली मिलती है।

? **विवेक वेलांकी:** आपके लिए मनोविज्ञान और शिक्षा का आपसी जुड़ाव इसलिए इतना मुखर रहा है क्योंकि आपने मनोविज्ञान बाकायदा पढ़ा है। साथ ही, आपने यह भी लिखा है कि दोनों के बीच यह सम्बन्ध बहुत प्रत्यक्ष नहीं है, हालाँकि बहुत महत्वपूर्ण ज़रूर है। यह सम्बन्ध क्या है? अध्यापकों के लिए मनोविज्ञान पर ध्यान देना इतना ज़रूरी क्यों है?

कमला मुकुन्दा: जी हाँ, आखिरकार यह हमारे काम का एक माध्यम है। यही वह सामग्री है जिसके साथ हम काम कर रहे होते हैं – बच्चों का दिमाग, हमारे अपने दिमाग! मेरा मतलब है कि अगर आप मिट्टी से बरतन बनाते हैं तो आपको पहले मिट्टी को अच्छी तरह समझना पड़ता। आप चाहे जो कहें, आपको उस माध्यम को समझना ही पड़ता है जिसमें आप

काम करने वाले हैं, और हम अध्यापकों के लिए तो यही सबसे अहम माध्यम है। मैंने देखा है कि एक औसत बी.एड. कोर्स में मनोविज्ञान के शीर्षक बहुत उबाऊ और सतही ढंग से पढ़ाए जाते हैं; अगर सतही न हों तो भी बहुत रोचक ढंग से तो कतई नहीं पढ़ाया जाता है। आम तौर पर ऐसा नहीं लगता कि स्कूल में जब आप पहले दिन पढ़ाने जाएँगे तो यह आपके लिए कोई महत्वपूर्ण सवाल होगा। मगर यह महत्वपूर्ण होना चाहिए। यही सवाल उन सारे प्रोफेसरों के लिए भी है जो अपने विभागों में बैठे हैं और इस सवाल पर काम कर रहे हैं। मगर वे किसके लिए काम कर रहे हैं? यह उम्मीद हम अध्यापकों से की जाती है कि हम कड़ियों को एक-दूसरे से जोड़कर देखें। यह ऐसे है, मानो मेडिकल शोधकर्ता शोध तो कर रहे हैं मगर इससे चिकित्सा विधियों और पद्धतियों पर कोई फर्क न पड़ रहा हो। अगर वाकई ऐसा है तो उस शोध का आप क्या करेंगे!

? **विवेक वेलांकी:** इस लिहाज़ से *व्हॉट डिड यू आस्क ऐट स्कूल टुडे?* मनोविज्ञान और शिक्षा पर कोई परम्परागत किताब नहीं है।

कमला मुकुन्दा: बिलकुल, यह परम्परागत किस्म की किताब नहीं है।

? **विवेक वेलांकी:** किताब की भूमिका में भी आपने इस तरह के शोधों की अच्छी खबर ली है। मसलन, आपने कहा है कि आपको इस किताब में 'भूल-भुलैया में दौड़ते जाने-पहचाने चूहों की कहानियाँ नहीं मिलेंगी'। क्या आप इस किताब के बारे में बताना चाहेंगी? वह क्या चीज़ है जो इसे दूसरी किताबों से अलग बनाती है?

कमला मुकुन्दा: दरअसल, काफी साल पहले मुझे किसी ने एक सुझाव दिया था – "क्या आप बी.एड. कोर्स के लिए एक बढ़िया किताब लिख सकती हैं?" मगर जब मैंने लिखना शुरू किया तो पाया कि किताब के कुछ अनिवार्य अध्यायों में आपको उस सवाल का इतिहास, उसकी पद्धतियाँ भी लिखनी पड़ती हैं। मैंने महसूस किया कि इससे तो लोग ऊब जाएँगे। तब मैंने दूसरे सिरे से बात करना शुरू किया। पाठ्यपुस्तक के सामान्य कोण की बजाय इस सवाल से शुरुआत की कि अध्यापक और माता-पिता किन सवालों से जूझते हैं। इस अर्थ में यहाँ परम्परागत चीज़ों को जगह नहीं मिली है। किसी खास अध्ययन के सन्दर्भ को छोड़ दें तो पूरी किताब में शायद ही कहीं पद्धति का ज़िक्र आता है और चूहों और भूल-भुलैया का ज़िक्र तो कहीं नहीं आता।

? **विवेक वेलांकी:** और एक अच्छे अर्थ में आपने ऐसे कुछ लोगों को भी महत्व दिया है जिन्हें आम तौर पर मनोविज्ञान की पाठ्यपुस्तकों में खास जगह नहीं मिल पाती है।

कमला मुकुन्दा: बिलकुल सही कहा आपने। मैं इस बात का दावा नहीं कर सकती कि यह वाकई सही बात है। मगर मैंने चीज़ों को एक खास ढंग से ही पेश किया है। यह एक तरह से व्यक्तिगत चयन का सवाल है। लगभग हर क्षेत्र में कुछ चिन्तक बहुत बड़े सितारे बन जाते हैं और वे अपने-अपने भव्य सिद्धान्त पेश करते हैं। वे सभी बहुत बुद्धिमान लोग होते हैं और लिहाज़ा, मैं उनके काम को या उनको नकारना नहीं चाहती। मगर मुझे जानने-बूझने के अन्य तरीके और स्रोत कहीं ज़्यादा आकर्षित करते हैं। जब आपके सामने ऐसे बहुत सारे लोग हों जो ख्याति न पा सके हों मगर सभी एक ही क्षेत्र में काम कर रहे हों और एक-दूसरे के काम की पुष्टि कर रहे हों तो मेरे खयाल में यह एक मूल्यवान योगदान होता है। भले ही पियाजे, मोन्टेसरी और वायगॉत्स्की बहुत बुद्धिमान लोग हैं, मगर उनके अलावा भी सैकड़ों ऐसे लोग हैं जो सूचना प्रसंस्करण (इंफर्मेशन प्रॉसेसिंग) या संज्ञानात्मक मनोविज्ञान (कॉग्निटिव सायकोलॉजी) और सामाजिक-सांस्कृतिक सिद्धान्तों पर आज भी काम कर रहे हैं। उनमें से ज़्यादातर बड़ी ख्याति प्राप्त नहीं कर पाते मगर मुझे उनका काम बहुत मूल्यवान लगता है।

? **विवेक वेलांकी:** माध्यम (सब्जेक्ट्स) के बारे में बात करते हुए आपने अधिगम और अध्यापन (सीखना और सिखाना) के मुद्दों को बाल विकास के दृष्टिकोण से सम्बोधित किया है। आप लिखती हैं कि अध्यापन एक खास तरह का कौशल है। इससे आपका क्या आशय है?

कमला मुकुन्दा: जी हाँ, इसकी जड़ें क्रमविकास मनोविज्ञान (इवॉल्यूशनरी साइकॉलॉजी) में मिलती हैं।

लीजिए, मैं इसे ज़रा सरल शब्दों में बता देती हूँ : किसी भी दूसरी पशु प्रजाति के शिशुओं के मुकाबले मनुष्य बहुत अपरिपक्व अवस्था में पैदा होते हैं। जन्म के समय हमारे पास बहुत कम सामर्थ्य होता है। मगर हम सीखने की अद्भुत

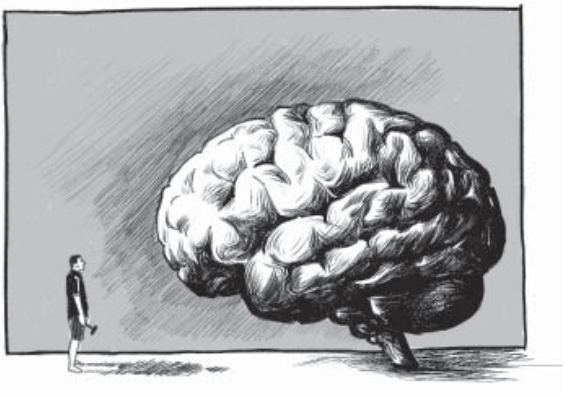

क्षमता के साथ पैदा होते हैं। इसका एक मतलब यह भी है कि हम तकरीबन किसी भी वातावरण में अपने आप को ढालना सीख सकते हैं। यह इन्सानों की एक बहुत कमाल की क्षमता है। सीखने की यह क्षमता असल में आजीवन सक्रिय रहती है और इसके साथ ही पढ़ाने या सिखाने की प्रवृत्ति भी लगातार साथ चलती जाती है। इसे जिस हद तक हम कर पाते हैं, उस हद तक कोई दूसरा जानवर नहीं करता। और ऊपर से हमारे पास लिखित और बोली जाने वाली भाषा भी है जो पढ़ाने और सीखने के हमारे दायरे व गहराई को और कई गुना बढ़ा देती है। इस लिहाज़ से यह बड़ी अनूठी स्थिति है। तो आप देख सकते हैं कि हर बच्चे को हर चीज़ शून्य से शुरू नहीं करनी है। उसे बहुत सारी चीज़ें सम्प्रेषित की जा सकती हैं और पढ़ाई जा सकती हैं; यानी आप काफी सारी दुनिया दूसरों के कन्धों पर बैठकर भी देख सकते हैं!

? **विवेक वेलांकी:** इससे कुछ समस्याएँ भी पैदा हुई हैं। यानी स्कूल की पूरी व्यवस्था और विभिन्न अन्य ताज़ा परिवर्तनों से तथा अधिगम को मापने पर जो ज़ोर दिया जा रहा है, उसमें कई समस्याएँ भी पैदा हो रही हैं। आपने इस बारे में पूरा एक अध्याय लिखा है। इस प्रसंग में मौजूदा सोच के साथ आपको क्या समस्याएँ दिखाई देती हैं?

कमला मुकुन्दा: इस मामले में बहुत सारे मुद्दे जुड़े हुए हैं। लिहाज़ा, पहला सवाल यह है कि बात शुरू कहाँ से करें! आकलन की आवश्यकता पर बहुत सारे लोगों को आपत्ति है। एक मुख्य आपत्ति इस बारे में है कि हम आकलन को देखते किस तरह हैं। हम इसे आम तौर पर एक ऐसी चीज़ के रूप में देखते हैं जो सीखने की प्रक्रिया पूरी होने के बाद सामने आती है। हम इसे विपरीत दिशा में नहीं देख पाते। मैं जानती हूँ कि सतत आकलन (फॉर्मेटिव असेसमेंट) और सत्रान्त आकलन (समेटिव असेसमेंट) के फर्क के बारे में बहुत सारे लोगों ने सुना होगा। लेकिन हमारे यहाँ सभी यही मानते हैं कि आकलन तो सत्र के आखिर में ही किया जा सकता है। एक तरह से यह बिलकुल बेतुकी बात है क्योंकि कायदे से आकलन का मकसद यह होना चाहिए कि आप अपने अध्यापन और अधिगम की प्रक्रिया को बदलते, समायोजित करते चलें। सबसे पहला मुद्दा तो यही है।

दूसरा सवाल यह है कि आकलन या मूल्यांकन सत्र के आखिर में ही क्यों किया जाता है? क्योंकि यह लोगों को छाँटने का, यह तय करने का एक तरीका है कि अगले स्तर पर कौन जाएगा, अगले स्तर के संसाधन किसको मिलेंगे और किसको नहीं मिलेंगे। अगर यह भी संजीदगी और ईमानदारी से किया जाता तो आप मान सकते थे कि इसमें एक मकसद है मगर अफसोस

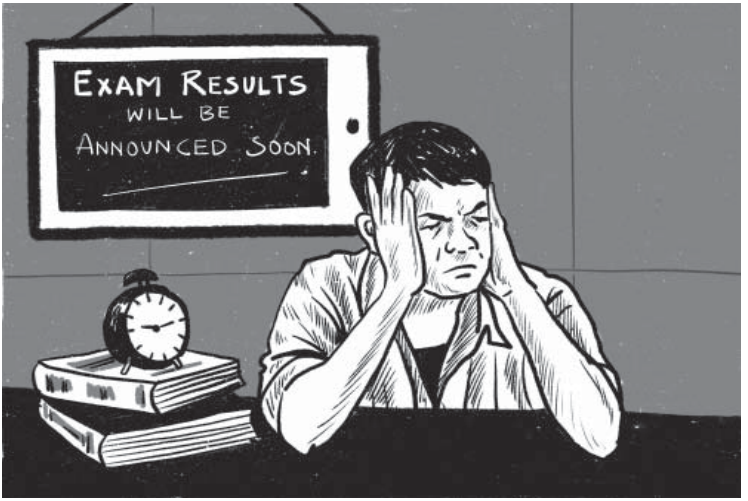

की बात यह है कि इस काम को भी बड़े कामचलाऊ ढंग से किया जा रहा है। अभी पिछले ही हफ्ते एक विश्वविद्यालय द्वारा जारी की गई कटऑफ लिस्ट को लेकर बड़ा हंगामा खड़ा हो गया था। यह एक निरर्थक-सी कवायद होती है। मैंने देखा कि एक लड़के को 88.5 प्रतिशत अंक मिले थे जबकि कटऑफ 90 प्रतिशत था। अब आप ही बताइए कि 90 प्रतिशत और 88.5 प्रतिशत वाले विद्यार्थियों के बीच कौन-सा भारी फर्क रहा होगा? मगर दाखिला एक को ही मिलना है। ऐसा लगता है कि हमने अपनी चेतना को अपराधबोध से मुक्त करने के लिए एक विस्तृत यांत्रिक व्यवस्था रच दी है। इसके दम पर हम आत्मविश्वास के साथ एक को हकदार व काबिल और एक को नाकाबिल घोषित कर देते हैं। यह आकलन की व्यवस्था की दूसरी बड़ी खोट है।

मूल्यांकन के प्रसंग में मुझे मोटे तौर पर ये दो मुद्दे दिखाई देते हैं मगर आगे जाएँगे तो और भी बहुत सारे मसले हैं जिन पर हमें ध्यान देना चाहिए। अगर आप सतत मूल्यांकन करते हैं यानी आप पढ़ाने और सीखने की प्रक्रिया के साथ लगातार मूल्यांकन करते जाते हैं तो उसके लिए भी आपको बहुत सोच-समझकर योजना बनानी पड़ती है। हमारे यहाँ लोगों को अच्छे इम्तहान या सवाल बनाने के लिए पढ़ाया या प्रशिक्षित भी नहीं किया जाता है। यह बात अध्यापकों के बारे में भी सच है। मेरे खयाल में हम उन्हें अच्छे सवाल पूछना सिखाते ही नहीं हैं जिससे वे यह जान सकें कि विद्यार्थी को कोई बात समझ में आ पायी है या नहीं।

? **विवेक वेलांकी:** आपने मूल्यांकन का एक वैकल्पिक तरीका सुझाया है - 'विश्वसनीय मूल्यांकन' (ऑथेन्टिक असेसमेंट)। आपका यह भी कहना है कि इस तरह का आकलन सम्भव है। इससे आपका क्या आशय है?

कमला मुकुन्दा: जी हाँ। यहाँ मुझे अपने उदाहरण को सन्दर्भ के थोड़ा और निकट रखना होगा, हालाँकि मैं नहीं जानती कि अगर मैं अपने स्कूल का उदाहरण लेती हूँ तो उससे दूसरे सन्दर्भों के लिए क्या सबक निकलेंगे। मगर, हम अपने स्कूल (सेंटर फॉर लर्निंग, बेंगलूरु) में जो करते हैं, वह कुछ इस प्रकार है : हम हर कक्षा में बहुत थोड़े बच्चे रखते हैं। पढ़ने के दौरान हम बच्चों को एक छोटे-से घेरे में बिठा लेते हैं ताकि मैं या कोई भी अध्यापक उन सभी की किताब-कॉपियों को देख सकें या अगर हम उन्हें अपनी कॉपी दिखाने को कहें तो वे आसानी-से बैठे-बैठे हमें दिखा सकें। अब हम एक-दूसरे से सवाल-जवाब करते हैं। इस तरह हम हर क्षण, हर बच्चे के सीखने के स्तर से जुड़े रहते हैं। यह आकलन का एक स्तर है। यह ऐसा मूल्यांकन है जो हर वक्त चलता रहता है। लेकिन यह सिर्फ मेरे दिमाग में है। यह अभिभावकों या दूसरे अध्यापकों को दिखाई नहीं पड़ेगा।

एक अध्यापक की दृष्टि से विश्वसनीय मूल्यांकन का दूसरा स्तर यह है कि मैं हर कुछ महीने में बैठकर हर विद्यार्थी के बारे में विस्तार से चिन्तन-मनन करूँ। शायद तीन महीने में या छह महीने में। और मैं उनके बारे में अपनी सोच, उनके अधिगम के बारे में अपनी राय इकट्ठा करूँ। मेरे खयाल में यह मूल्यांकन गुणात्मक और विवरणात्मक होना चाहिए। यह मूल्यांकन उपयोगी हो, इसके लिए ज़रूरी है कि इसमें उस व्यक्ति के साथ संवाद भी किया जाए जिसे मैं अपनी बात बताना चाहती हूँ। अगर मैं किसी विद्यार्थी को यह कहती हूँ कि "देखो, अभी तक तुमने जो कुछ किया है, उसके बारे में मेरी राय यह है" तो यह कहना-सुनना दोनों तरफ से होना चाहिए। अगर मैं किसी अन्य अध्यापक/अध्यापिका या माता-पिता को बता रही हूँ तो मुझे उन्हें बताना चाहिए कि मेरे क्या अनुभव हैं। इसके लिए आप पेरेंट मीटिंग्स या रिपोर्ट मीटिंग्स वगैरह अवसरों का प्रयोग कर सकते हैं।

मूल्यांकन को विश्वसनीय बनाने का एक और तरीका शोध पद्धति जैसा है जिसके लिए आप हर बच्चे का पोर्टफोलियो तैयार करते हैं। आप हर विद्यार्थी के कामों का संकलन पोर्टफोलियो में रखते हैं। यहाँ उसका सबसे अच्छा काम होना चाहिए और यह चयन रेंडम या बेतरतीब नहीं होना चाहिए। कायदे से पोर्टफोलियो में आपको उसका सबसे बेहतरीन काम रखना है। जो भी इसे पढ़े, उसे विद्यार्थी के अधिगम स्तर का पूरा बहुआयामी

अन्दाज़ा मिल जाना चाहिए। ये इसी तरह के विभिन्न विकल्पों में से कुछ उदाहरण हैं। मैंने केवल संक्षेप में अपनी बात बताई है।

? **विवेक वेलांकी:** आपने जो बताया है, वह रास्ता अधिगम के एक ज़्यादा मनोगत (सब्जेक्टिव) मूल्यांकन की ओर जाता है। यानी इसमें आप हर बच्चे का अलग ढंग से मूल्यांकन कर सकते हैं। लेकिन आजकल तो वस्तुनिष्ठता के लिए जैसा हंगामा दिखाई देता है, क्या उसमें आपके सुझाव एक रुकावट नहीं बन जाएँगे?

कमला मुकुन्दा: जी हाँ, कुछ लोग इसे रुकावट भी मान सकते हैं। अगर मैं इसके वैकल्पिक बन्दोबस्त पर सोचूँ जिसे ज़्यादा वस्तुनिष्ठ माना जाता है, यानी अंक आधारित मूल्यांकन व्यवस्था, तो उसमें तो मुझे कोई अर्थ ही दिखाई नहीं देता। व्यक्तिगत रूप से मेरा यही मानना है कि अगर मैं किसी के साथ चर्चा कर रही हूँ तो सब्जेक्टीविटी की समस्या तो होनी ही नहीं चाहिए क्योंकि मैं तो सीधे आपके साथ संवाद कर रही हूँ और आप मुझसे पूछ सकते हैं कि मेरा क्या आशय है। यहाँ तक कि आप यह भी कह सकते हैं कि "मगर मुझे तो ऐसा नहीं लगता, मेरे खयाल में स्थिति ऐसी नहीं, वैसी है।" हम बहस भी कर सकते हैं और मेरे हिसाब से तथाकथित 'वस्तुनिष्ठ' मूल्यांकन के मुकाबले यह ज़्यादा बेहतर तरीका है। वैसे भी जब आप टेस्ट का कोई पर्चा बनाते हैं तो उसमें जिन चीज़ों को आप शामिल करते हैं, उनके बारे में भी कोई व्यक्ति ही फैसले लेता है। तो इसमें वस्तुनिष्ठता कहाँ से आ जाती है?

? **विवेक वेलांकी:** मगर आज तो भारत में ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया में एक पूरा आन्दोलन छिड़ा हुआ दिखाई देता है। पीसा और टिम्स जैसी बड़े पैमाने की विशिष्ट परीक्षाएँ आयोजित की जा रही हैं। इनमें से ज़्यादातर एक ऐसी परिधि रचने की कोशिश कर रहे हैं जिसके तहत अमेरिका और भारत या किसी भी देश के बच्चे एक-जैसे सवालों के जवाब दे रहे होंगे। इस प्रवृत्ति के बारे में आपका क्या कहना है?

कमला मुकुन्दा: सबसे पहले तो मैं पूछना चाहती हूँ कि इसका मकसद और ज़रूरत क्या है? इसके पीछे आपका इरादा क्या है? हम इतने दूर-दूर के इलाकों को एक-जैसा दिखाना क्यों चाहते हैं? बल्कि मेरे हिसाब से तो पूरे भारत में भी एक-जैसी परीक्षाओं का क्या मतलब है? जितना मानकीकरण और नियमीकरण हम कम करेंगे, मेरी राय में उतना बेहतर होगा। फिर भी सवाल यही है कि ये सब आप करना क्यों चाहते हैं? क्या यह सारी जद्दोजहद बच्चों को मापने, उनकी तुलना करने और इस बात पर सन्तुष्ट या असन्तुष्ट महसूस करने भर की ही नहीं है कि हमने अपना काम कर दिया है और फलाँ बच्चा फलाँ बच्चे से बेहतर या बुरा है! मुझे समझ में नहीं आता कि इन सारी बातों का सीखने से क्या मतलब है। इस तरह की प्रवृत्ति के जवाब में मेरा सवाल यह है: आप क्यों यह सब करना चाहते हैं? मेरे खयाल में केवल सुरक्षित महसूस करने की इच्छा से ऐसा किया जा रहा है - "हाँ, हमने यह कर दिया" और जब हम उसे ठीक-से न कर पाएँ, जैसा भारत में दिखाई देता है तो परेशान हो जाएँ और फिर बहाने बनाने लगें।

? **विवेक वेलांकी:** आपकी किताब को छपे कई साल हो चुके हैं। इस किताब के लिए आपको अभी तक सबसे असामान्य प्रतिक्रिया क्या मिली है?

कमला मुकुन्दा: पता नहीं, इसे असामान्य प्रतिक्रिया कहा जा सकता है या नहीं, मगर यह सबसे हृदयस्पर्शी अनुभव तो ज़रूर था। जब मैं किताब लिख रही थी तो लगातार मुझे यह खयाल कचोट रहा था कि मैं अध्यापकों की बिरादरी से बात करना चाहती हूँ मगर क्या कभी यह किताब उन तक पहुँच पाएगी? क्या वे वाकई कभी इसे पढ़ेंगे? क्या उन्हें यह समझ में आएगी? लिहाज़ा, जब भी मैं यह सुनती हूँ कि किताब किसी व्यक्ति को सम्बोधित कर पायी है तो मुझे बहुत तसल्ली होती है। हाल ही में मैं धर्मशाला में थी और वहाँ तिब्बती स्कूलों में काम करने वाले निष्कासित तिब्बती सरकार के किसी व्यक्ति ने मुझे 100 किताबों का एक गट्ठर दिखाया और कहा, "मैं इन्हें अगले महीने लद्दाख ले जा रहा हूँ। वहाँ लद्दाख के दुर्गम इलाकों में भी बहुत सारे अध्यापक हैं जिन्हें मैं यह किताब

दिखाना चाहता हूँ।" और मैंने सोचा, "क्या बात है! यह किताब लद्दाख जाएगी! अपनी पूरी ज़िन्दगी में मैं तो शायद कभी वहाँ न जा पाऊँ पर कम-से-कम यह किताब तो वहाँ जा रही है।" तो, इसी तरह की चीज़ें मुझे खुशी देती हैं और यह बात भी अच्छी लगती है कि अब इसका हिन्दी, कन्नड़, तमिल और मलयालम में भी अनुवाद किया जा चुका है। यह जितने ज़्यादा अध्यापकों तक पहुँच पाएगी, मेरे खयाल में उतना बेहतर होगा।

? **विवेक वेलांकी:** क्या आप और किताबें लिखने के बारे में सोच रही हैं?

कमला मुकुन्दा: यह थोड़ा कठिन सवाल है। फिलहाल तो किताब लिखने की बजाय शिक्षक-शिक्षा के लिए मॉड्यूल लिखने अथवा पाठ्यचर्याएँ तैयार करने में मदद देने का ही फैसला लिया है। हो सकता है, आने वाले समय में मैं लिखूँ, बल्कि मैं अभी भी लिख रही हूँ मगर फिलहाल मेरा लेखन किसी किताब के मकसद से नहीं चल रहा है। ये सिर्फ अलग-अलग टुकड़े या अध्याय भर हैं। मालूम नहीं कि आने वाले वक्त में ये क्या शक्ल लेंगे। फिलहाल, मुझे ओपन एक्सेस या मुक्त पहुँच का विचार काफी आकर्षित कर रहा है और लिहाज़ा मैं इसमें ज़्यादा दिलचस्पी ले रही हूँ। मिसाल के तौर, इस इंटरव्यू जैसी चीज़ें।

कमला मुकुन्दा: *व्हॉट डिड यू आस्क ऐट स्कूल टुडे?* की लेखिका हैं। फिलहाल, सेंटर फॉर लर्निंग, बेंगलूरु में पढ़ा रही हैं।

विवेक वेलांकी: फिलहाल, मिशिगन स्टेट यूनिवर्सिटी स्थित कॉलेज ऑफ एजुकेशन के करिक्युलम, इंस्ट्रक्शन एण्ड टीचर एजुकेशन विभाग से पीएच.डी. कर रहे हैं। जिस समय यह साक्षात्कार रिकॉर्ड किया गया था, उस समय वे रीजनल रिसोर्स सेंटर फॉर एलिमेंटरी एजुकेशन (आरआरसीईई), दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रोजेक्ट ऑफिसर के पद पर काम कर रहे थे। अन्तर्राष्ट्रीय शैक्षिक सुधार, आलोचनात्मक सिद्धान्त, जाति, नस्ल और जेंडर आदि सवाल उनके शोध का मुख्य विषय रहे हैं।
सम्पर्क: vivek.vellanki@gmail.com

अँग्रेज़ी से अनुवाद: योगेंद्र दत्त।

सभी चित्र: अक्षय सेठी: वे रोज़मर्रा के अनदेखे, मामूली व बार-बार दोहराते पहलुओं में खुद को अपनी ड्रॉइंग, कॉमिक्स और इंस्टॉलेशन के ज़रिए झोंका करते हैं। कॉलेज ऑफ आर्ट, नई दिल्ली से पेंटिंग में स्नातकोत्तर व दिल्ली में ही रहते और काम करते हैं।

यह साक्षात्कार क्षेत्रीय प्रारम्भिक शिक्षा संसाधन केन्द्र (आरआरसीईई), दिल्ली यूनिवर्सिटी द्वारा डायलॉगिंग एजुकेशन शृंखला के तहत रिकॉर्ड किए गए साक्षात्कार का सम्पादित संस्करण है। इस संकलन के साक्षात्कारों को लिखित और ऑडियो माध्यमों में www.rrcee.net पर भी देखा जा सकता है। सम्पादक - विवेक वेलांकी व पूनम बत्रा।

पुस्तक *व्हॉट डिड यू आस्क ऐट स्कूल टुडे?* एकलव्य द्वारा हिन्दी में भी प्रकाशित की जा चुकी है।

New Titles

Science, social science and mathematics

Price: ₹300

First Language

Price: ₹320

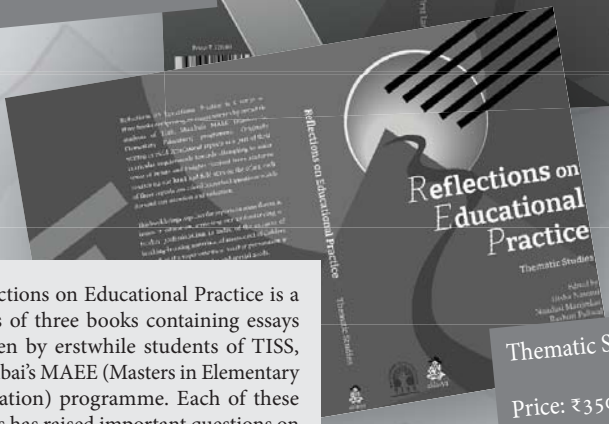

Thematic Studies

Price: ₹350

Reflections on Educational Practice is a series of three books containing essays written by erstwhile students of TISS, Mumbai's MAEE (Masters in Elementary Education) programme. Each of these essays has raised important questions on the pedagogy of mathematics, science, social studies, language teaching, TLM, teacher professionalism etc that require our attention.

To place the order -

Phone: +91 755 297 7770-71-72; Email: pitara@eklavya.in

www.eklavya.in | www.pitarakart.in

एकलव्य

अगस्त 2026 : आएँगी हल्की फुहारें

रे ब्रैडबरी

अनुवाद: हरजिन्दर सिंह 'लाल्टू'

अमेरिकन कथाकार रे ब्रैडबरी अपनी अनोखी विज्ञान-कथाएँ और फन्तासी के लिए जाने जाते हैं। उनकी कहानियों में इन्सान की फितरत की गहरी पड़ताल है। उनकी कई रचनाओं पर फिल्में बनी हैं।

1949 में लिखी यह कहानी नाभिकीय जंग के बाद के हाल में ऐसे घर की है, जहाँ कोई ज़िन्दा इन्सान नहीं है, पर इन्सान की पहचान हर चप्पे पर है। मशीनों की मदद से घर में नियमित गतिविधियाँ चलती हैं। जो कुछ तबाह होता है, वह सब इन्सान के वजूद की पहचान है। सबसे तकलीफदेह एहसास सृजन की तबाही है, कविताएँ सुनने के लिए कोई नहीं बचता है, सदी के सबसे बड़े कलाकार पिकासो और मातीस की कृतियाँ जलकर राख हो जाती हैं। कहानी में सेरा टीसडेल की अद्‌भुत कविता का इस्तेमाल है, जिसमें इन्सान का वजूद नहीं रहने पर बहार का आना बेमानी होने की पीर बखानी गई है। - (अनुवादक)

बैठक में बोलती घड़ी कूक उठी - टिक-टिक, बजे सात ठीक, उठ मेरे मीत, उठ मेरे मीत, बजे सात ठीक! मानो उसे फिक्र है कि कोई न उठेगा। अलसुबह घर खाली पड़ा था। घड़ी टिक-टिक करती, खालीपन में अपनी कूक दुहराती चली। सात बजकर नौ हुआ, नाश्ते का वक्त हुआ, सात बजकर नौ हुआ!

रसोई में ब्रेकफास्ट के चूल्हे ने सीटी मारते हुए उसाँस भरी और अपनी गर्म अँतड़ियों से आठ बढ़िया भूरे टोस्ट, आठ ऊपर कुसुम वाले तले अण्डे, बेकन (सूअर का मांस) की 16 फाँकें, दो कॉफी और दूध के दो ग्लास निकालकर रखे।

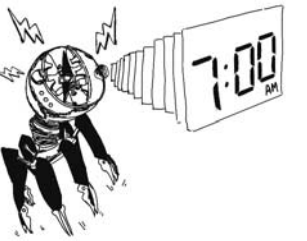

"आज 4 अगस्त, 2026 है," रसोई की छत से एक और आवाज़ आई, "हम कैलिफोर्निया के ऐलेनडेल शहर

में हैं।" शहर का नाम तीन बार दुहराया गया ताकि याद रहे। "आज जनाब फेदरस्टोन का जन्मदिन है। आज तिलिता की शादी की सालगिरह है। बीमा के पैसे भरने हैं; पानी, गैस और बिजली के बिल के पैसे भी भरने हैं।"

दीवारों में कहीं बात आगे बढ़ी, क्लिक की आवाज़ें आईं, मशीनी बिजली की नज़र-तले टेप चल पड़े।

आठ बजकर एक, टिक-टिक, आठ बजकर एक ठीक, स्कूल चलने का टाइम हुआ, काम पर चलने का टाइम हुआ, चलो, निकलो, आठ बजकर एक देख लो! पर न कोई दरवाज़ा खुला न बन्द हुआ, किसी कालीन पर रबर की एड़ियों की नर्म थापें न पड़ीं। बाहर बारिश हो रही थी। सामने के दरवाज़े पर मौसम परखने वाले डिब्बे से शान्त गुंजन उठी, "रिमझिम बरखा रानी आई, रबर-रेनकोट का दिन है लाई...।" साथ में हाँ मिलाती टिप-टिप बूँदें खाली घर की छत पर टपकती रहीं।

बाहर की ओर गराज ने धुन गाई और दरवाज़ा ऊपर चढ़ाते हुए इन्तज़ार करती तैयार गाड़ी की झलक दिखलाई। देर तक इन्तज़ार करने के बाद दरवाज़ा वापस गिर गया।

साढ़े आठ तक अण्डे कुम्हलाकर बासी हो चुके थे और टोस्ट पत्थर जैसे सख्त हो गए थे। एल्यूमीनियम की एक फन्नी ने उन्हें समेटकर मोरी में डाला। गर्म पानी के भँवर में चकराते वो एक धातु के गढ़े में निगले गए और वहाँ से निकास के ज़रिए कहीं दूर किसी समन्दर में फेंके गए। गन्दे बर्तन गर्म पानी के वॉशर में डाल दिए गए और वहाँ से साफ चमकते निकल आए।

घड़ी कूकी, सवा नौ हो गया, सफाई का टाइम हो गया।

दीवार में बने बाड़ों से छोटे रोबो

चूहे उछलते हुए निकल आए। रबर और धातु से बने सफाई के ये छोटे जानवर कमरों में चारों तरफ फैल गए। वे कुर्सियों से टकराते, चकराती मूँछों को ताव देते, कालीनों के सिरों की गाँठों को मथते, आराम-से उनके अन्दर की धूल निकालते। फिर तिलिस्मी हमलावरों जैसे वे अपने बिलों में घुस गए। उनकी बिजली से चमकती गुलाबी आँखें बुझ गईं। घर की सफाई हो चुकी थी।

दस बज गए। बारिश के पीछे से धूप निकल आई। झंखाड़ और मलबे के शहर में घर अकेला खड़ा था। यही एक घर अकेला बचा था। रात को तबाह हो चुके शहर से रेडियो-सक्रिय चौंध निकलती, जो मीलों दूर तक दिखलाई पड़ती।

सवा-दस। बागीचे में फव्वारे सुनहरी बौछारों के साथ चल पड़े। सुबह की नाज़ुक सबा चमकीले बिखरते कतरों से भर गई। खिड़कियों के शीशों पर पानी की बौछारें पड़ीं। हर ओर से सफेदी झड़ चुके पश्चिम की ओर की जली हुई दीवार पर से पानी बहता हुआ नीचे गिरा। कोई पाँच जगहों को छोड़कर घर का पश्चिमी हिस्सा पूरी तरह से काला पड़ चुका था। यहाँ लॉन पर घास काटते एक आदमी की छाया थी। जैसे कि कोई फोटोग्राफ हो, यहाँ फूल चुनती हुई एक औरत की छवि थी। थोड़ी और दूर, हवा में हाथ लहराता एक छोटा लड़का, जिससे थोड़े ऊपर की ओर उछाली गेंद की छवि और दूसरी ओर कभी नीचे न आ पाई गेंद पकड़ने के लिए हाथ उठाए एक लड़की – पल भर वक्त की अवधि में इनकी तस्वीरें लकड़ी में जलकर खुद गई थीं।

आदमी, औरत, बच्चे, गेंद – पुताई के ये पाँच हिस्से बच गए थे। बाकी सब कुछ चारकोल की परत भर रह गया था।

फव्वारे की हल्की बौछारें बागीचे में रोशनी बिखेर रही थीं।

आज के पहले तक यह घर सुकून का मंज़र रहा था। बड़ी सावधानी से यहाँ से सवाल आते, "कौन है? पासवर्ड बतलाओ।" और अकेली लोमड़ियों और मिमियाती बिल्लियों से जवाब न पाकर, इसकी खिड़कियाँ बन्द होती रही थीं और परदे गिरते रहे थे, मानो घर किसी बूढ़ी बाई जैसा मशीनी बौखलाहट की हद तक खुद को बचाने की फिक्र में मशगूल था।

घर वाकई हर आवाज़ से काँप उठता था। कोई गौरैया किसी खिड़की को छू जाती तो परदा झट-से उठता। चिड़िया डर जाती और उड़ भागती! हाँ, घर को किसी चिड़िया तक का छूना मकबूल नहीं था!

दस हज़ार छोटे-बड़े, सेवक, अर्दली, एक साथ उस घर को मन्दिर बना चुके थे। पर वहाँ के प्रभु जा चुके थे और मानो धार्मिक ढंग से रस्में बेमानी और बेवजह होती जा रही थीं।

दिन के 12.

सामने आँगन में एक कुत्ता काँपता हुआ मिमियाया।

सामने के दरवाज़े ने कुत्ते की आवाज़ पहचान ली और वह खुला। कभी बड़े कद का और तगड़ा रह चुका कुत्ता अब हड्डियों तक मरियल और घावों से भरा हुआ था। साथ मिट्टी की लकीरें खींचता हुआ कुत्ता घर के अन्दर आ गया। उसके पीछे मिट्टी साफ करते, फालतू की ज़हमत उठाते चूहे गुस्से में गुर्राते चले।

ऐसा था कि दरवाज़े के नीचे से पत्ती का टुकड़ा भर आ जाए तो दीवार के पलड़े खुल जाते और ताँबे के बने सफाई वाले चूहे तुरन्त उछलकर निकल आते। नापसन्द धूल, बाल या कागज़ इस्पात के जबड़ों में पकड़ फँसा लिए जाते और

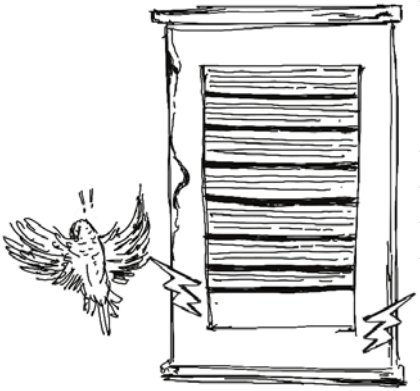

तेज़ रफ्तार से बिलों में ले जाए जाते। वहाँ, तहखाने तक जाती नलियों से अँधेरे कोने में शैतान दानव जैसी बैठी भट्टी की उसाँसें भरती निकास-नली में कूड़ा समा जाता।

हर दरवाज़े पर बौखलाहट में भौंकता हुआ कुत्ता सीढ़ियाँ चढ़ता ऊपर की ओर दौड़ा। आखिरकार जैसा घर ने समझ लिया था, उसे भी समझ आ गया कि वहाँ केवल सन्नाटा है।

वह हवा को सूँघने लगा और रसोई के दरवाज़े को उसने पंजों से खरोंचा। दरवाज़े के पीछे चूल्हा मालपुआ बना रहा था, जिसकी घनी मीठी खुशबू और साथ में चाशनी की महक घर भर में फैली हुई थी।

कुत्ते के मुँह से झाग निकल रहा था, वह दरवाज़े पर लेटा रहा। उसकी आँखों में आग धधक रही थी और वह सूँघता जा रहा था। वह अपनी पूँछ काटता चकराता दौड़ता रहा, पागल-सा चकराया और मर गया। घण्टे भर वह बैठक में पड़ा रहा।

"दो बज गए," आवाज़ कूकी।

नज़ाकत के साथ सड़न का एहसास पाकर चूहों की फौजें बिजली वाली हवा में उड़ती स्याह पत्तियों जैसे गुनगुनाती हुई निकलीं।

सवा-दो।

कुत्ता गायब हो चुका था।

तहखाने में भट्टी अचानक जल

उठी और चिनगारियों के भँवर चिमनी में उछलते ऊपर की ओर उठे।

दो बजकर 35.

आँगन में ताश खेलने के लिए टेबल उभर आईं। अलग-अलग पैड पर ताश की पत्तियाँ चित्तियों-सी फरफराईं।

अण्डे के सलाद वाली सैंडविचों के साथ उम्दा शराब के जाम ओक लकड़ी से बनी बेंचों पर आ पहुँचे। संगीत बजने लगा।

पर टेबल पर सन्नाटा था और ताश की पत्तियाँ छूने को कोई न था।

चार बजे मेज़ की टाँगें बड़ी तितलियों-सी मुड़कर बन्द हो गईं और पलड़ों वाली दीवारों में समा गईं।

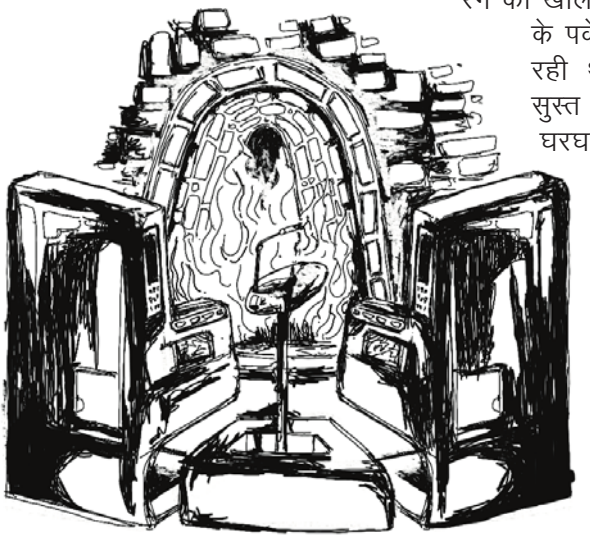

साढ़े चार।

नर्सरी की दीवारें जगमगा उठीं।

जानवरों की आकृतियाँ उभर आईं: स्फटिक के बने पीले जिराफ, नीले शेर, गुलाबी चिकारे और नीली चमक वाले तेंदुए उछल रहे थे। दीवारें काँच की बनी थीं। उनमें से रंग और फन्तासी का खेल दिखता था। तेल से लचीले बने दाँतों में छिपी फिल्में टिककर चल रही थीं और लगता था कि दीवारें ज़िन्दा हैं। नर्सरी का फर्श भुरभुरे अनाज के खेत-सा तराशा गया था। उस पर एल्यूमीनियम के तिलचट्टे और लोहे की बनी टिड्डियाँ दौड़ रही थीं। थमी हुई गर्म हवा में जानवरों के रोओं की तीखी महक में नाज़ुक लाल तन्तुओं वाली तितलियाँ नाच रही थीं। एक तीखे-से रंग की खाल में से पीले मधुमक्खियों के पके छत्ते जैसी आवाज़ें आ रही थीं, जो दरअसल एक सुस्त बड़बड़ाते शेर की घरघराहट थी। जंगली जिराफ की टापों की टप-टप और जंगल में ताज़ा बारिश की टिप-टिप आवाज़ें आ रही थीं। साथ ही, गर्मी में सूख गई घास पर दूसरे जानवरों के खुरों की आवाज़ें थीं। दीवारें मीलों तक दूर फैली सूखी खरपतवार और अनन्त आसमान

में विलीन हो गईं। जानवर काँटों की झाड़ियों के पीछे और पोखरों की ओर चले गए।

अब बच्चों की बेला आ गई।

पाँच बज गए। बाथ टब साफ गर्म पानी से भर गया।

छ:, सात, आठ बज गए। जादू के खेल की तरह रात का भोजन परोसा गया। पढ़ने के कमरे में कहीं कुछ हल्का-सा टकराया। अलाव में जलती आग से हल्के ताप की लपटें उठ रही थीं। उसके उल्टी तरफ धातु के बने स्टैंड में से एक सिगार निकल आया, जिसके सिरे पर आधा इंच हल्की स्याह राख थी। उसमें से धुआँ निकल रहा था, उसे अपने पीने वाले का इन्तज़ार था।

नौ बज गए। बिस्तरों ने अपने छिपे सर्किट गर्म किए। यहाँ रातों को ठण्ड पड़ती है।

नौ बजकर पाँच। स्टडी की छत पर से एक आवाज़ आई:

"मिसेस मैकलेलन, आज आप कौन-सी कविता सुनना चाहेंगी?"

घर सन्नाटे में डूबा रहा।

आखिर फिर आवाज़ आई, "आपकी कोई पसन्द नहीं है तो मैं कुछ भी आपको सुना रहा हूँ।"

आवाज़ के साथ हल्का संगीत गूँज उठा। "तो सुनिए सेरा टीसडेल की कविता; जहाँ तक मुझे याद है, आपकी पसन्द की कवि हैं...

"हल्की फुहारें आएँगी और ज़मीं महकेगी,
अबाबीलें तीखी चहकती चकराएँगीं;
रात को पोखर में गाते मेंढक होंगे
काँपती सफेदी में जंगली आलूबुखारे होंगे,
आग-से धधकते पंख लिए लाल सीने वाले पंछी होंगे
निचले बाड़ों पर बैठ मनमाफिक सीटियाँ बजाते होंगे;
किसी को नहीं पता होगा कि एक जंग छिड़ी थी,
तब कोई नहीं जानेगा जब आखिर जंग रुक जाएगी
न पंछी न पेड़ों को, किसी को फर्क नहीं पड़ेगा,
आदमजात हमेशा के लिए खत्म हो जाएगी
और खुद बहार जब सुबह को जागेगी
बड़ी बेखबर होगी कि हमारी मौजूदगी न होगी।"

पत्थर के अलाव पर आग जलती रही। ट्रे पर बेजान राख के ढेर पर सिगार गिर गया। चुप खड़ी दीवारों के बीच कुर्सियाँ एक-दूसरे की ओर ताकती रहीं और संगीत बजता रहा।

***

दस बजे घर मौत की ओर बढ़ चला।

हवा बही। एक पेड़ की गिरती हुई डाल रसोई की खिड़की से टकराई। शीशी में भरा सफाई का घोल छितराता हुआ चूल्हे पर बरसा। पल भर में कमरा लपटों की चपेट में था!

"आग!" एक आवाज़ चीखी। घर की बत्तियाँ जली-बुझीं, छतों से पानी के पम्प, पानी की बौछारें बरसाने लगे। पर तब तक घोल फर्श पर बिछे लिनोलियम के रेज़िन पर फैल चुका था और रसोई के दरवाज़े के नीचे से मानो फर्श को चाटता, निगलता हुआ आगे बढ़ रहा था। कई आवाज़ें एक साथ चीख रही थीं, "आग, आग, आग!"

घर ने खुद को बचाने की कोशिश की। दरवाज़े पूरी तरह बन्द हो गए। पर ताप की वजह से खिड़कियाँ टूट गईं और हवा बहती हुई आई और आग निगलने लगी।

करोड़ों चिनगारियों वाली आग की लपटें आसानी-से कमरा-दर-कमरा फैलती रहीं और फिर सीढ़ियाँ चढ़ने लगीं। दीवारों से पानी फेंकते चूहे चिंचियाते रहे, पानी की पिचकारियाँ चलाते रहे और फिर और पानी लाने दौड़ते रहे।

दीवारों से फव्वारे मशीनी बारिश बरसाते रहे।

पर देर हो चुकी थी। उसाँसें भरता कोई पम्प कहीं झटके-से रुक गया। आग बुझाने वाली बारिश रुक गई। कई दिनों से नहाने के टब भरने

वाली और बर्तन धोने वाली पानी की बची हुई सप्लाई खत्म हो गई।

चिटकती हुई आग सीढ़ियों पर चढ़ने लगी। ऊपरी हॉल में तेल की परत पर भुने चटपटे व्यंजनों की तरह पिकासोवों और मातीसोवों को निगलती आग कलाकृतियों के कैन्वस को नज़ाकत के साथ काली राख के भुरभुरे खस्ते में बदल रही थी।

अब आग बिछौनों पर लेटी थी, खिड़कियों पर नाच रही थी, परदों का रंग बदल रही थी!

और तब मज़बूती से बचाव की कोशिशें शुरू हुईं।

बरसाती के छिपे दरवाज़ों से, बिना आँखों वाले रोबो चेहरे सामने आ गए और उनकी नलियों जैसे मुँह से ज़ोरों-से हरे रंग का रसायन छिड़का गया।

आग पीछे को हुई, जैसे मरे हुए साँप को देखकर भी हाथी एकबारगी पीछे को हटता है। अब फर्श पर हरे झाग के ठण्डे ज़हर से आग का कत्ल करने 20 साँप फन पटक रहे थे।

पर आग चालाक थी। उसने बरसाती की ओर से घर के बाहरी

हिस्से में पम्पों तक लपटें पहुँचा दी थीं। फिर विस्फोट हुआ! पम्पों को चलाने वाला, बरसाती कमरे वाला ज़हन शहतीरों पर काँसे के छोटे-छोटे टुकड़ों में बिखर गया।

आग हर कपड़ों की आल्मारी तक दौड़ती आई और वहाँ लटके कपड़ों को उसने छुआ।

घर काँप रहा था। ओक की बनी हड्डी-दर-हड्डी काँप रही थी। ताप से डरता उसका नंगा जिस्म दुबकता जा रहा था। उसकी तारें, उसकी शिराएँ उभर आई थीं, मानो किसी सर्जन ने उसकी चमड़ी चीरकर लाल नसों और शिराओं को झुलसी हुई हवा में काँपने को छोड़ दिया था। "बचाओ! बचाओ! आग! भागो! भागो!" ताप आईनों को बर्फानी जाड़े की भुरभुरी बर्फ की तरह टुकड़ों में चूर कर रही थी। आवाज़ें नर्सरी के बालगीत-सा चीख रही थीं – "आग, आग, भागो, भागो" – कोई दर्जन आवाज़ें, ऊँची और धीमी – मानो किसी जंगल में अकेले पड़ गए बच्चे मरते जा रहे हों। तारों पर से चादर गर्म छोटे अखरोट जैसी चटखती हुई टूटने लगीं और आवाज़ें धीरे-धीरे खत्म हो गईं। एक, दो, तीन, चार, पाँच, आवाज़ें खत्म हो गईं।

नर्सरी में पौधों के जंगल जल गए। नीले शेर गरजते रहे, बैंगनी जिराफ टाप-टपकते खत्म हो गए। तेंदुए चकराने लगे, उनका रंग बदल गया और आग के आगे-आगे दौड़ते एक करोड़ जानवर दूर किसी भाप बनती नदी की ओर गायब हो गए...

10 और आवाज़ें खत्म हुईं। आग के धसान के आखिरी पलों में कई भूली भटकी-सी आवाज़ों का समूह-गान सुनाई पड़ रहा था। कहीं वक्त बताया जा रहा था, कहीं संगीत बज रहा था, दूर से संचालित घास काटने की मशीन से लॉन की घास काटने की आवाज़ थी, ज़ोर-से खुल रहे या और बन्द हो रहे सामने वाले दरवाज़े पर कोई छतरी बौखलाहट के साथ खुल रही थी; हज़ारों ऐसी बातें हो रही थीं, मानो किसी घड़ी की दुकान में हर घड़ी एक-दूसरे के ठीक पहले या बाद घण्टों की आवाज़ बजा रही हो; पागलपन और बौखलाहट भरा मंज़र था, पर साथ ही कहीं सामूहिक एकजुटता थी; मिलकर गा रही, चीख रही आवाज़ें। कुछ बचे हुए सफाई वाले चूहे बहादुरी के साथ बाहर निकलकर भयंकर राख को बुहार रहे थे! और हालात को नज़ाकत के साथ नज़रअन्दाज़ करती एक आवाज़ आग में जल रहे पढ़ने के कमरे में ऊँची आवाज़ में कविता पढ़ रही थी, जब तक सारी फिल्मों की फिरकियाँ जल नहीं गईं, तारें जलकर कुम्हला नहीं गईं और सर्किट चरमरा नहीं गए।

आग ने घर को फोड़ डाला और उसे ज़मीन पर चित गिरने दिया, जिससे धुआँ और चिनगारियों के फुनगों के पल्ले फूलते हुए उड़ निकले।

रसोई में आग और जलते काठ की बारिश के ठीक पहले चूल्हा पागलों की तरह तेज़ रफ्तार से नाश्ता तैयार कर रहा था – 10 दर्जन अण्डे, ब्रेड की छः फाँकों के टोस्ट, 20 दर्जन बेकन की पट्टियाँ। जैसे ही आग इनको निगल गई, चूल्हा फिर से काम पर लग गया और उसमें से बौखलाई साँसें निकल रही थीं।

टक्कर। बरसाती का कमरा रसोई और आँगन में धँसता-टकराता हुआ। आँगन तहखाने में, तहखाना आगे किसी छोटे तहखाने में। डीप फ्रिज, आरामकुर्सी, फिल्मों के टेप, सर्किट, बिस्तर और दीगर ऐसे ढाँचे, गहरे कहीं गढ़े में ढेर बनकर फिंक गए।

धुआँ और चुप्पी। ढेर सारा धुआँ।

पूरब की ओर भोर की हल्की किरणें उभरीं। खण्डहर में एक दीवार अकेली खड़ी थी। सूरज मलबे के ढेर और उससे निकलती भाप पर चमकता उठ रहा था और दीवार में से एक आखिरी आवाज़ लगातार एक ही बात बोलती जा रही थी:

"आज 5 अगस्त 2026 है, आज 5 अगस्त 2026 है, आज..."

रे ब्रैडबरी (1920-2012): अमेरिकी लेखक और पटकथा लेखक थे। 20वीं सदी के सबसे प्रसिद्ध अमेरिकी लेखकों में से एक, रे ब्रैडबरी ने फन्तासी, विज्ञान कथा, डरावनी, रहस्यमयी और यथार्थवादी कथा सहित कई प्रकार की विधाओं में काम किया। *न्यूयॉर्क टाइम्स* ने ब्रैडबरी को आधुनिक विज्ञान कथाओं को साहित्य की मुख्यधारा में लाने के लिए सबसे ज़्यादा ज़िम्मेदार लेखक कहा था।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: हरजिन्दर सिंह 'लाल्टू': सेंटर फॉर कम्प्यूटेशनल नेचुरल साइंस एंड बायोइन्फॉर्मेटिक्स, आई.आई.आई.टी., हैदराबाद में प्रोफेसर। प्रिंसटन यूनिवर्सिटी, न्यू यॉर्क, यूएसए से पीएच.डी.। सन् 1987-88 में *एकलव्य* के साथ यूजीसी द्वारा स्पेशल टीचर फैलोशिप पर हरदा में रहे। आप हिन्दी में कविता-कहानियाँ भी लिखते हैं।

सभी चित्र: पूजा के. मैनन: *एकलव्य*, भोपाल में बतौर जूनियर ग्राफिक डिज़ाइनर काम कर रही हैं। जन्म पलक्कड़, केरल में हुआ लेकिन एक जगह से दूसरी जगह यात्रा करने के कारण बहुत-से नए लोगों से मिलना हुआ। चूँकि वे अन्यथा बातचीत करने में झिझकती थीं, स्केचिंग ने उनके विचारों को सम्प्रेषित करने और टिप्पणियों का दस्तावेज़ीकरण करने में एक माध्यम का काम किया। धीरे-धीरे रेखाचित्र कहानियों में बदल गए जिन्होंने उन्हें जीवन और लोगों को समझने और खुद को व्यक्त करने में मदद की।

यह कहानी बैंटम बुक्स द्वारा प्रकाशित पुस्तक *द मार्शियन क्रॉनिकल्स* से साभार।

सवालीराम

सवाल: आम जहाँ से टूटता है, उस काले हिस्से का चोप गले में खराश क्यों पैदा करता है?

- मृगांक चमोली, कक्षा-5,
केन्द्रीय विद्यालय, पौड़ी, उत्तराखण्ड

जवाब: क्या आपको आम खाना पसन्द है? मुझे तो बहुत पसन्द है। अपने बचपन की सबसे स्नेहपूर्ण यादों में से एक आपके साथ साझा करती हूँ - गर्मियों के दिनों में मैं और मेरी छोटी बहन स्कूल से घर तक भागकर आते थे। हमारे घर आने पर माँ फ्रिज से आम निकालती, आधे आम से हमारे लिए मैंगो शेक बनाती, और आधा आम काटकर हमें खाने को देती। यह मेरे पूरे दिन का सबसे पसन्दीदा हिस्सा हुआ करता था।

बरसात और गर्मियों के मौसम में आम घर-घर में देखने मिलता है। बच्चे और बड़े, दोनों एक-समान चाव से इसे खाते हैं। कुछ अध्ययनों से पता चलता है कि भारत में आम की खेती लगभग 5000 साल पहले शुरू हुई थी। आम को फलों का राजा यूँ ही नहीं कहा जाता - एक सर्वे के अनुसार आम दुनिया का सबसे पसन्दीदा फल है। यह बेहद स्वादिष्ट तो होता ही है, और इसके साथ-साथ अनेक पोषक तत्वों से भरा होता है।

आम एंटीऑक्सीडेंट गुणों के साथ-साथ सुरक्षात्मक यौगिकों का एक अच्छा स्रोत है, और इसमें विटामिन A और विटामिन C भरपूर मात्रा में होते हैं। यह भी पाया गया है कि आम हमारे पाचन तंत्र को ठीक रखने में और त्वचा की कोमलता बरकरार रखने में भी मददगार होता है। भारत में आम को प्रेम का प्रतीक माना जाता है, और अक्सर तोहफे के तौर पर आम की टोकरी दी जाती है। भारत में बड़े पैमाने पर आम उगाने वाले राज्यों में उत्तर-प्रदेश, आंध्र-प्रदेश, कर्नाटक, बिहार, और तेलंगाना प्रमुख हैं। 'चौसा आम' जो कि आम की सबसे मीठी किस्मों में से एक है, उत्तर-प्रदेश में पाया जाता है। इस नस्ल के आम हरे-पीले रंग के होते हैं, और उनमें भरपूर गूदा होता है।

मध्य प्रदेश के लगभग हर ज़िले में आम की खेती की जाती है। प्रसिद्ध किस्मों के अलावा, राज्य में आम की कुछ कम ज्ञात किस्में भी पाई जाती हैं, जो कि स्थानीय लोगों द्वारा बड़े चाव से खाई जाती हैं। मध्य प्रदेश में मशहूर 'नूरजहाँ' आम भी पाए जाते हैं। इस किस्म के एक आम का वज़न 3.5 किलोग्राम तक हो सकता है,

एक नूरजहाँ आम कई सामान्य आमों के बीच।

और कीमत एक हज़ार रुपए प्रति आम तक होती है। चूँकि यह किस्म सीमित संख्या में ही उगाई जाती है, इसकी बुकिंग महीनों पहले ही कर दी जाती है।

क्यों होती है आम से गले में खराश?

आम खाते वक्त कई लोग महसूस करते हैं कि आम के डण्ठल के आसपास के काले हिस्से का चोप गले में खराश पैदा करता है। आइए, समझने की कोशिश करते हैं कि ऐसा क्यों होता है। आम के छिलके में, और खासकर उसके डण्ठल के आसपास एक खास किस्म का रसायन पाया जाता है जिसका नाम है 'यूरुशिओल' (urushiol)। आम खाते हुए जब यह रसायन त्वचा के सम्पर्क में आता है तो किसी-किसी व्यक्ति के होंठ और उसके आसपास के हिस्से में छाले हो जाते हैं। कभी-कभी आम को छूने भर से भी त्वचा में खुजली हो सकती है। यह भी यूरुशिओल के कारण ही होता है।

आम एनाकार्डियेसी कुल का पौधा है। इस कुल के कई पौधों में ऐसे पदार्थ पाए जाते हैं जो एलर्जी पैदा करते हैं। किसी खाद्य पदार्थ में एलेर्जीनिक गुण होने का अर्थ है कि अगर हम उस पदार्थ को खाएँ तो हमें एलर्जी हो सकती है। आम में उपस्थित यह एलर्जेन ओरल एलर्जी सिंड्रोम (ओ.ए.एस.) से पीड़ित व्यक्तियों में लक्षणों को ट्रिगर करता है। ओ.ए.एस. के लक्षणों में मुँह या गले में खुजली, झुनझुनी और सूजन शामिल है। कुछ व्यक्तियों में, यूरुशिओल से सम्पर्क होने पर त्वचा पर एलर्जी हो जाती है। आम की चोप से गले में खराश होने का कारण भी यूरुशिओल ही है। इस रसायन की वजह से कुछ लोगों में गले में खराश के साथ-साथ दर्द और सूजन भी हो सकती है। विभिन्न व्यक्तियों की

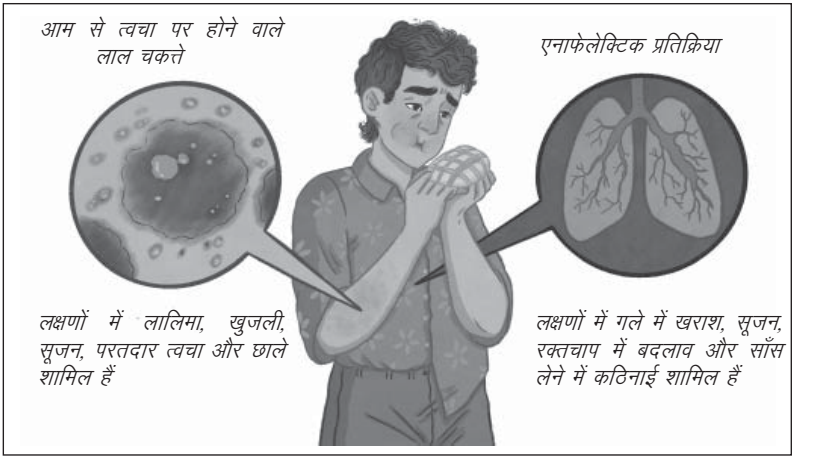

यूरुशिओल के प्रति संवेदनशीलता अलग-अलग होती है। इस परेशानी से बचने के लिए करना सिर्फ इतना है कि आम को छीलने से पहले हल्के गर्म पानी से धो लें या फिर आम चूसने से पहले उसके डण्ठल की ओर का शुरुआती रस थोड़ा-सा निकाल दें। ऐसा करने से आप आम का आनन्द यूरुशिओल के कारण होने वाली गले में खराश के बिना ले पाएँगे!

श्रेया: इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ साइंस एजुकेशन एंड रिसर्च, मोहाली में जीवविज्ञान की छात्रा हैं। रचनात्मक लेखन में रुचि। वे शब्दों के माध्यम से विज्ञान और दुनिया के बारे में लोगों के अन्दर आश्चर्य की भावना को बढ़ाने में भूमिका निभाना चाहती हैं।

– – — – — –

इस बार का सवाल: कबूतर या पक्षी कंकड़ को कैसे पचाते हैं?

शिक्षक, डाइट, 2022
मुज़फ्फरपुर, बिहार

आप हमें अपने जवाब sandarbh@eklavya.in पर भेज सकते हैं।

प्रकाशित जवाब देने वाले शिक्षकों, विद्यार्थियों एवं अन्य को पुस्तकों का गिफ्ट वाउचर भेजा जाएगा जिससे वे पिटाराकार्ट से अपनी मनपसन्द किताबें खरीद सकते हैं।

मोहनदास गाँधी के साथ काका कालेलकर। सर्जनात्मकता की कार्य-कारण प्रणाली क्या है? विचारों की व्यापकता के लिए भाव किस हद तक ज़िम्मेदार हैं? विचारों के एक्स्ट्रापोलेशन से सर्जनात्मक विकास कैसे हो सकता है? काका कालेलकर के साथ सुरेन्द्र नाथ त्रिपाठी के साक्षात्कार में हम ऐसे कई पेचीदा प्रश्नों से रूबरू होते हैं। पढ़िए इस पूरे साक्षात्कार को पृष्ठ 51 पर।

फोटो: गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, जलगाँव से साभार।

RNI No.: MPHIN/2007/20203

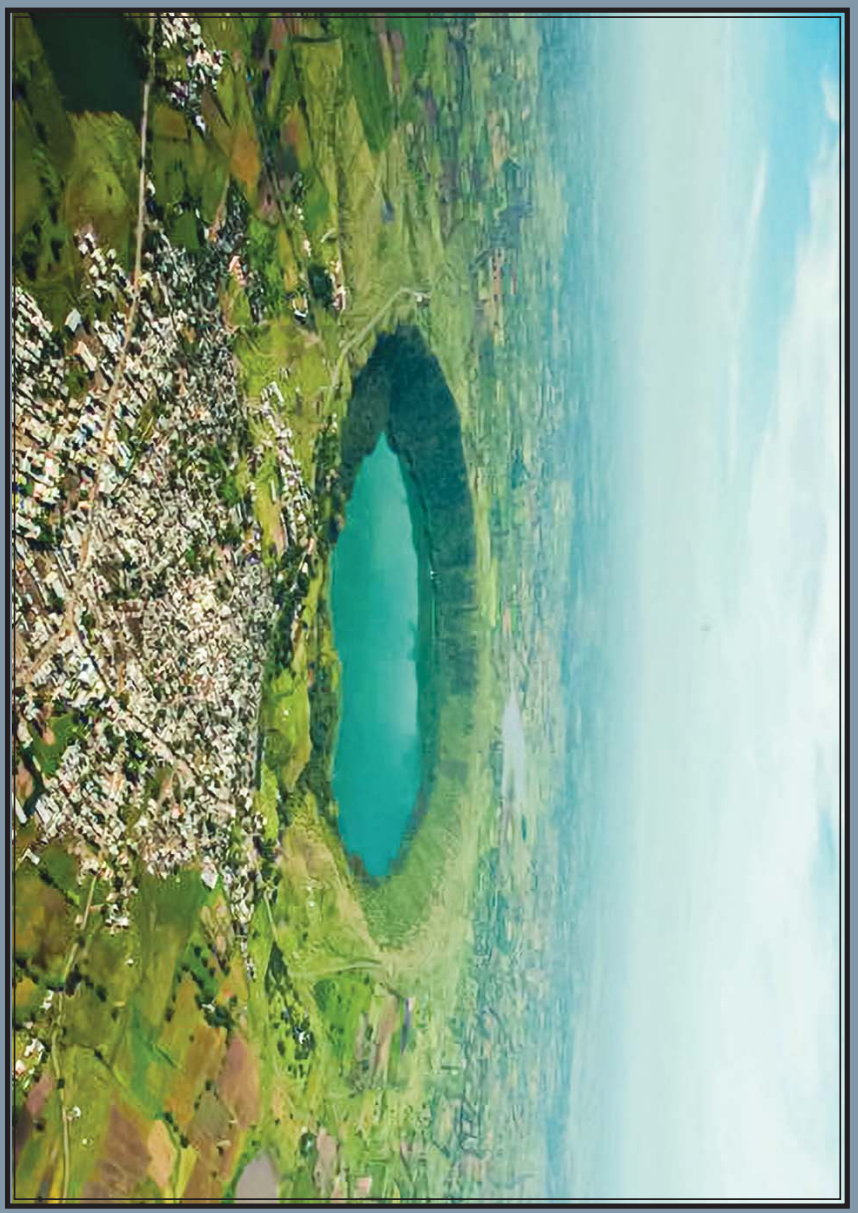

प्रकाशक, मुद्रक, राजेश खिंदरी की ओर से निदेशक एकलव्य फाउण्डेशन, जमनालाल बजाज परिसर,
जाटखेड़ी, भोपाल - 462 026 (म.प्र.) द्वारा एकलव्य से प्रकाशित तथा
भण्डारी प्रेस, ई-2/106, अरेरा कॉलोनी, भोपाल - 462 016 (म.प्र.) से मुद्रित, सम्पादक: राजेश खिंदरी।